शुद्ध शब्दोच्चारण

(उ० प्र० शासन द्वारा पुरस्कृत, १९७३-७४)

विश्व नाथ सिंह
एम्० ए०, एल्० टी०, सा० रत्न

मानक प्रकाशक, इलाहाबाद

शुद्धशब्दोच्चारण :

सम्मति एवं संस्तुतियाँ

: १ :

श्री विश्वनाथ सिंह द्वारा लिखित 'शुद्ध शब्दोच्चारण' :: शीर्षक हस्तलिखित पुस्तक को देखने का मुझे अवसर मिला था। हिन्दी शब्दों के उच्चारण के सम्बन्ध में मेरी जानकारी में यह कदाचित् प्रथम नियमबद्ध प्रयास है। अतः मैं इसका स्वागत करता हूँ। यदि सुयोग्य लेखक पुस्तक की सूत्र-शैली के साथ-साथ संक्षिप्त व्याख्या का भी समावेश कर दें, तो हिन्दी के विद्यार्थी तथा अध्यापक दोनों के लिए पुस्तक की उपयोगिता बढ़ जावेगी। श्री विश्वनाथ सिंह का प्रयास स्तुत्य है।

प्रयाग,

—धीरेन्द्र वर्मा

९—८—७२

: २ :

श्री विश्वनाथ सिह् की पुस्तक 'शुद्धशब्दोच्चारण' मैंने देखी जो मुझे वहुत पसन्द आई। इसको तैयार करते समय दो-एक बार लेखक ने मुझसे परामर्श भी किया था। आज हिन्दी का उच्चारण सारे देश में होता है और इस उच्चारण में न केवल प्रादेशिकभाव बल्कि हिन्दी क्षेत्र के जनपदीय प्रभाव भी दिखाई देते हैं, जो जनपदों की बोलियों की ध्वनियों और उच्चारण क्रम के कारण उत्पन्न हो गये हैं। इन परिस्थितियों में परिनिष्ठित हिन्दी का स्वरूप स्थिर रखने के लिए यह आवश्यक है कि शुद्ध उच्चारण पर यथेष्ट बल दिया जाय और इसका समादेश हिन्दी शिक्षकों के पाठ्यक्रम में किया जाय। इस दृष्टि से श्री विश्वनाथ सिह् का यह ग्रन्थ बहुत उपयोगी सिद्ध होगा। ऐसी अच्छी कृति के लिए मैं उन्हें बधाई देता हूँ।

सीनेट हाउस, इलाहाबाद — **बाबूराम सक्सेना**

११ १९७२ कुल पति

भूमिका

शब्दोच्चारण भाषा का एक प्रमुख अङ्ग है। शब्दों के शुद्ध उच्चारण पर ही अर्थ की स्पष्टता और आलेख की शुद्धता निर्भर है। दूषित उच्चारण से सम्यक् अर्थ-बोध और शुद्ध वर्ण-विन्यास, ये दोनों ही सम्भव नहीं हैं।

शुद्धशब्दोच्चारण एक शास्त्रीय विषय है और शास्त्रीय विवेचन की अपेक्षा रखता है। उसे केवल अनुकरण शुद्धता तक सीमित रखना ठीक नहीं है। मानक या शुद्ध उच्चारण शास्त्रीय नियमो पर आधारित हो सकता है, न कि किसी व्यक्ति या किसी समुदाय के उच्चारणों पर। हम अपने उच्चारण में शुद्धता से अधिक सुगमता का, सजगता से अधिक शैथिल्य का ध्यान रखते हैं, फिर उसे उच्चारण की कसौटी कैसे बनाया जा सकता है ?

शब्दोच्चारण की दो प्रमुख समस्याएँ हैं—एक है 'उच्चारण-खण्ड तथा उनकी परिवर्तनशीलता' और दूसरी है 'शब्द गत शुद्ध व्यञ्जन या व्यञ्जनों का उच्चारण'। पहली का समाधान उच्चारण-खण्ड के नियमों में और दूसरी का 'उच्चारण साहचर्य' एवं 'उच्चारण सबलता' के नियमों में मिलता है। दूसरी के अन्तर्गत साहचर्य की विशिष्ट परिस्थितियों मे हमें 'द्वित्व एवं संविभाग नियम' के दर्शन होते हैं।

'सामयिक एवं भावुक' ऐसे शब्दों के यकार-वकार को लोप से बचाने के लिए 'ध्वनि चिरीनता' के नियमों की खोज की गयी है

और उसके आधार पर 'गयी-गई', 'गये-गए' आदि तद्भव शब्द-रूपो मे प्रथम की शुद्धता का प्रतिपादन किया गया है।

'सम्पर्कित अनुनासिकता' के नियम से तत्सम शब्दों में अप्रकट अनुनासिक स्वरों का ज्ञान कराया गया है, साथ ही वे अनुनासिक व्यञ्जनों अथवा अनुस्वार से किस प्रकार 'पृथक् एवं लघु' है, इसको भी भलीभाँति स्पष्ट किया गया है।

पुस्तक के अन्तिम प्रकरणों में, कुछ विशिष्ट, लुप्त एवं विकसित ध्वनियों के स्वरूप पर विचार किया गया है। बिल्कुल अन्त के पृष्ठों मे, उच्चारण दृष्टि से दूषित लिपि-चिह्नों के सुधार का सुझाव दिया गया है।

विषय के समान इस पुस्तक की 'विधा' भी नयी है। सूत्रो मे शास्त्रीय चिन्तन एवं विवेचन की परम्परा, यद्यपि अत्यन्त प्राचीन है किन्तु हिन्दी में उसका प्रचलन न होने से, यह एक सर्वथा नवीन प्रयास है और कदाचित् प्रथम श्रीगणेश भी। लोकोक्तियों एवं मुहावरो के समान, सूत्र अपने लघु कलेवर में, ज्ञान के अद्भुत भण्डार है और सहज स्मृति ग्राह्य होने से उस ज्ञान-भण्डार के अद्भुद संरक्षक भी।

इस पुस्तक में चार प्रकार के सूत्रों का प्रयोग हुआ है—समस्या, उदाहरण, नियामक एवं व्याख्या। समस्या-सूत्र विचारणीय विषयो के सूचक हैं, साथ ही उनका दूसरा महत्त्वपूर्ण कार्य, चेतना को उत्तेजित करके, उसे तत्काल विचारणीय विषय या विषयों की ओर लगाना है।

उदाहरण-सूत्रों पर नियामक सूत्रों की रचना हुई है। उदाहरण-सूत्र नियमों के मूलाधार हैं, अतः उन पर विशेष ध्यान दिया गया है

उनकी संख्या भी अन्य सूत्रों की अपेक्षा बहुत अधिक है। उदाहरण प्रायः तत्सम शब्दों से लिये गये हैं, किन्तु विषय की स्पष्टता के लिए कुछ प्रकरणों में तद्भव शब्दों को भी अपनाया गया है। नियामक सूत्रों के अन्तर्गत, 'निषेधक सूत्र' भी आते हैं, जो व्यापक नियमों की अपवाद दशाओं के सूचक हैं, साथ ही उनके द्वारा 'क्यों' का भी उत्तर दिया गया है।

इस पुस्तक का आरम्भ और अन्त, प्राचीन शास्त्रीय विधि से हुआ है, किन्तु विषय-विवेचन में 'अन्वेषण और निष्कर्ष' विधि अपनायी गयी है। इस विधि के अनुसार अर्जित ज्ञान, पुरातन ज्ञान के साथ सामञ्जस्य स्थापित करता रहता है और पाठकों को प्रतिक्षण सफलता और उत्साह की अनुभूति होती रहती है। वस्तुतः यह एक उपयोगी शिक्षण-विधि है और उसी विधि से इस पुस्तक के सूत्रों एवं प्रकरणों का गठन किया गया है।

सूत्र-प्रणाली की दुरूहता से बचने के लिए, प्रकरणों के आरम्भ में उनके स्पष्ट शीर्षक दिये गये हैं तथा प्रकरणान्त में सूत्रों के पारस्परिक सम्बन्ध को 'सम्बन्ध-निर्देश' के रूप में सूचित कर दिया गया है।

इस प्रकार, 'विषय-विधा-विधि', इन तीनों दृष्टियों से, इस पुस्तक को मौलिक बनाने का प्रयास किया गया है, फिर भी यह पुस्तक कैसी है, इसका अन्तिम निर्णय विज्ञ पाठक ही कर सकते हैं।

हम, पूज्य डॉ० धीरेन्द्र वर्मा तथा डॉ० बाबूराम सक्सेना के चिर-ऋणी हैं, जिन्होंने इस कृति को देखकर समुचित देने का कष्ट

उठाया है और जिनकी महती कृपा से ही यह कृति विज्ञ पाठकों के समक्ष प्रस्तुत हो सकी है।

हम, अतीत और वर्तमान के उन सभी भाषा-विदों के प्रति भी आभारी हैं, जिन्होंने इस पुस्तक के लिखने में प्रत्यक्ष या परोक्ष किसी प्रकार की कोई सहायता पहुँचायी है। हमें, पं० उमाशंकर शुक्ल हिन्दुस्तानी एकेडेमी प्रयाग, तथा डॉ० आर्येन्द्र शर्मा से इस पुस्तक के सम्बन्ध में विचार-विमर्श का जो अवसर मिला है, इसके लिए भी हृदय से आभारी हैं।

इस पुस्तक के प्रकाशन के सन्दर्भ में डॉ० शुकदेव सिंह तथा प्रकाशक श्री पुरुषोत्तमदास मोदी से प्राप्त सहयोग के लिए भी लेखक अपनी कृत-ज्ञता प्रकट करता है।

१८ मार्च, १९७१ —विश्व नाथ सिंह

प्रधानाचार्य, द्वापर विद्या पीठ

बरईपारा—मया—फैजाबाद।

द्वितीय संस्करण

: २ :

'शुद्धशब्दोच्चारण' के प्रथम संस्करण (१९७२) की पुस्तकें कई वर्ष पूर्व (१९७७ में) समाप्त हो गयी थीं; किन्तु पुनर्मुद्रण का कार्य अभी तक सम्भव नहीं हो सका था। प्रसन्नता का विषय है कि उसका द्वितीय संस्करण शीघ्र प्रकाशित होने जा रहा है।

जिस सहज जिज्ञासा, सुदीर्घ चिन्तन एवं मनन के आधार पर एक दशक पूर्व 'शुद्धशब्दोच्चारण' का प्रथम प्रणयन हुआ था, उसके तथ्य एवं तर्क आज भी अधूमिल हैं। फलतः द्वितीय संस्करण में संशोधन का अवसर मात्र वर्तनी की शुद्धता अथवा विषय की स्पष्टता के लिए, यत्र-तत्र दो-चार शब्दों के परिवर्तन तक सीमित रहा है।

प्रथम संस्करण के प्रकाशन से अब तक उक्त कृति के प्रचार एवं प्रसार के सम्बन्ध में यद्यपि बहुत कुछ नहीं किया जा सका है, फिर भी कुछ ऐसे सन्तोषजनक प्रयास अवश्य हुए हैं, जिनके सहयोग से उक्त दिशा में पुस्तक के उज्ज्वल भविष्य की कामना की जा सकती है।

दस वर्षों की इस अवधि में, 'शुद्धशब्दोच्चारण' पर दो मनीषियों—डॉ० धीरेन्द्र वर्मा एवं डॉ० बाबूराम सक्सेना की अमूल्य सम्मतियाँ (क्रमशः ६-८-७२ तथा ११-११-७२ को) प्राप्त हो चुकी हैं। डॉ० वर्मा हमारे बीच नहीं हैं, किन्तु उक्त कृति के लिए, वे जो शुभाशीषः दे गये हैं, वह उसके फूलने-फलने में सदा सहयोग देता रहेगा। इस सन्दर्भ में डॉ० सक्सेना की शुभ कामनाएँ भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण, प्रेरणाप्रद और प्रचार-प्रसार के पथ को प्रशस्त करने वाली हैं।

उत्तरप्रदेश-शासन ने पाँच सौ रुपये का 'साहित्यिक पुरस्कार' (वर्ष १९७३-७४) देकर उक्त कृति को सम्मानित किया है, जो इस अवधि की एक अन्य बड़ी उपलब्धि है।

स्व० डॉ० धीरेन्द्र वर्मा ने अपनी सम्मति में 'सूत्र शैली के साथ-साथ संक्षिप्त व्याख्या' का जो सुझाव दिया है, उसे हम कुछ कारणों से अभी तक पूरा नहीं कर सके; लेकिन इस सम्बन्ध में तीन उपयोगी लेख 'हिन्दुस्तानी' (त्रैमासिक, इलाहाबाद) पत्रिका में प्रकाशित हो चुके है—(१) अकार लोप तथा उससे उत्पन्न समस्याएँ (भाग ३२, अक ४, १९७१), (२) शब्दोच्चारण की प्रमुख समस्याएँ (भाग ३४, अक २, १९७२) (३) प्रत्याहार सूत्रों के अनुसार हमारी वर्णमाला का स्वरूप (भाग ३८, अंक १, १९७७)।'' ये लेख बहुत कुछ उनकी इच्छा के अनुरूप प्रतिपाद्य विषय एवं सूत्र-शैली के व्याख्याता हैं।

पुस्तक के प्रचार एवं प्रसार में सहयोग देने वाली दो संक्षिप्त समीक्षाएँ (रिव्यू) भी प्रकाशित हुई हैं। प्रथम समीक्षा, डॉ० महावीर प्रसाद लखेड़ा (इलाहाबाद विश्वविद्यालय) की है जो 'हिन्दुस्तानी—(भाग ३६ अंक ३, सितम्बर १९७५)' में प्रकाशित हुई है; तथा दूसरी समीक्षा डॉ० आनन्द नारायण शर्मा की है, जो 'बिहार राज्य भाषा पटना' की 'परिषद् पत्रिका —(वर्ष १६ अंक १, अप्रैल ७६)' में प्रकाशित हुई है।

इन दोनों समीक्षाओं में प्रतिपाद्य विषय की संक्षिप्त किन्तु सार-गर्भित समीक्षा करते हुए प्रस्तुत कृति की महत्ता और उपयोगिता स्वीकार की गयी है।

सूत्र-शैली जो हिन्दी में सर्वथा एक नवीन प्रयोग है—के सम्बन्ध मे श्री लखेड़ाजी का कथन है—''लेखक ने सूत्र-शैली का सफल प्रयोग किया है, जो हिन्दी में एक अभिनव प्रयोग है। लेखक का विवेचन विस्तृत होने के साथ-साथ विशद भी है

डॉ० शर्मा ने सूत्र-शैली के सम्बन्ध में कुछ भिन्न मत प्रकट किये हैं—"प्रारम्भ में कुछ उदाहरण प्रस्तुत कर सूत्र-शैली में निष्कर्ष रख दिये गये हैं, जो पूरे वाक्य के रूप में भी नहीं है। इससे पुस्तक की उपयोगिता सीमित हो गयी है और प्रवेशार्थी सम्भवतः अधिक लाभान्वित न हो सकें।"

इस सन्दर्भ में मेरा नम्र निवेदन है कि पुस्तक मात्र प्रवेशार्थियों के लिए नहीं लिखी गयी है; उसका एक लक्ष्य सूत्र-शैली में विषय का शास्त्रीय प्रतिपादन भी है। सूत्रों का सौन्दर्य उनके लघु कलेवर मे ही निहित है। ऐसी दशा में वाक्य के आवरण में उसे अर्थात् उस सौन्दर्य को ढंक देना उचित नहीं है। डॉ० शर्मा ने उदाहरण-सूत्रो की संख्या की भी आलोचना की है—"दर असल, क्रमाक केवल सूत्रों के साथ दिये जाने चाहिए थे, उदाहरण सूत्रों के साथ नहीं। जहाँ कई प्रकार के उदाहरण देकर निष्कर्ष प्रस्तुत किये हैं, वहाँ भी उनके साथ क, ख, ग आदि वार्णिक संकेतों का प्रयोग अपेक्षित था। इससे अनावश्यक संख्या-विस्तार न होता और सूत्रों को ग्रहण करने में सहूलियत होती।" मेरी विनम्र दृष्टि में 'आगमन विधि' के शास्त्रीय प्रतिपादन में, एक जैसे उदाहरणों को एक साथ आबद्ध करने के लिए उन्हें क्रमांक देना आवश्यक है। यही सूत्रशैली का सौन्दर्य है। उदाहरणों को क्रमांक देने से वे स्वयं उद्धरण के योग्य हो गये हैं। किसी क्रमांक में उदाहरण देकर, उसका निष्कर्ष देना कुछ उपयोगी भले जान पड़े, उसमें विषय-प्रतिपादन का कोई विशेष सौन्दर्य नहीं है। पाणिनि ने अष्टाध्यायी में 'प्रत्ययः (३/१/१) आदि शीर्षकों को अधिकार-सूत्र बना कर इसी तथ्य को स्वीकार किया है। पाणिनि ने 'इच्छा (३/३/१०१)' ऐसे शब्दों का जो मात्र अपने रूप तक सीमित है, सूत्र मानकर ही परिगणित किया है। ऐसे सूत्र, समीक्षकों की दृष्टि में न संख्या विस्तारक हैं और न उनकी संख्या अनावश्यक ही मानी गयी है। 'उदाहरण सूत्र' सम्पूर्ण विवेचन के मूलाधार हैं। ऐसी दशा में उनके शास्त्रीय संकलन

को 'सूत्र' संज्ञा देना अनुचित नहीं है। अनुक्रम में संकलित करके क्रमांक देने में, वे किसी न किसी एकता एवं भिन्नता को प्रकट करने वाले, सचमुच वास्तविक सूत्र बन गये हैं। फलतः उनका लक्ष्य मात्र निष्कर्ष की ओर अग्रसर करना ही नहीं, बल्कि वे स्वयं निष्कर्ष रूप हैं।

फरवरी १९७१ में जब मैं डॉ० धीरेन्द्र वर्मा से उनके घर पर मिला था, तो उन्होंने पाण्डुलिपि देखने के पश्चात् वही परामर्श दिया था, जो डॉ० शर्मा ने अपनी समीक्षा में दिया है; किन्तु मेरे लौटते समय, जब वे बरामदे तक आये, तब रोक कर कहा—"देखो, बताये ढंग से पहले दो-एक प्रकरण ही करके देखना; यदि वह न जंचे तो पुस्तक को इसी रूप में रहने देना।" कदाचित् मेरे चलते-चलते डॉ० वर्मा के मन में यह बात आ गयी थी कि उनकी बतायी विधि से पुस्तक की शास्त्रीयता समाप्त हो जायेगी और वह मात्र व्याकरण की सामान्य पुस्तक बनकर रह जायेगी। इसलिए उन्होंने मुझे स्वतन्त्र करते हुए, एक प्रकार से वे अपने परामर्श को ही वापस ले लिया। पूर्वाग्रह एवं दुराग्रह से दूर रह कर, किसी कृति का समुचित मूल्यांकन एवं सम्मान करने वाला उनके जैसा भाषाविद् विरला ही होगा।

मैं उन सभी महानुभावों एवं सहयोगियों के प्रति हृदय से आभारी हूँ, जिन्होंने इस पुस्तक के 'लेखन-प्रकाशन-प्रचार एवं प्रसार' में किसी प्रकार का कोई सहयोग दिया है।

३ जून, १९८२ —विश्व नाथ सिंह

प्रधानाचार्य, द्वापर विद्या पीठ
बरईपारा—मया—फैजाबाद।

अनुक्रम

संकेत

१—उच्चारण खण्ड	।
२—उपशब्द	⁐
३—लघु	।
४—गुरु (बलाघात का सूचक)	S
५—दीर्घ व्यञ्जन	न्̄न्
६—बलाघात से प्रभावित व्यञ्जन	न्͡न्
७—ह्रस्व ए	एॅ
८—ह्रस्व ओ	ओॅ

: १ :

विषय-प्रवेश

१. शब्दों के शुद्ध एवं मानक उच्चारण की जिज्ञासा।

२. अनेक अक्षरों के, अनेक प्रकार से, गठित अथवा सम्पर्कित होने से, शब्दोच्चारण की अपनी पृथक् समस्यायें।

३. समस्यायें, कलेवर - दृष्टि से, शब्दों के छोटे-बड़े होने से भी।

४. कल = कल'
तल = तल'

किन्तु

सरल = स' रल
सरलता = स' रल' ता
आदि।[१]

५. 'कल' आदि छोटे शब्दों में एक, किन्तु 'सरल' आदि बड़े शब्दों में एक से अधिक उच्चारण-खण्ड।

---

१. इस पुस्तक में, इस चिह्न (') से उच्चारण खण्ड का बोध।

६. सरल = स' रल
तरल = त' रल

किन्तु

सरला = सर' ला
तरला = तर' ला

क्यों ?[1]

७. उच्चारण-समस्यायें, उच्चारण-खण्डों के, परिवर्तनशील होने से भी।

८. रामाधार = रामा' धार
चराचर = चरा' चर

में

दो, किन्तु उतने ही अक्षर वाले,
सफलता = स' फल' ता
कोमलता = को' मल' ता

में

तीन उच्चारण-खण्ड क्यों ?

९. सफलता = स' फल'—ता
कोमलता = को' मल'—ता
तीसरे की तुलना में प्रथम दो खण्डों की समीपता क्यों ?

---

१. एक से अधिक उच्चारण-खड वाले शब्दों में, अन्तिम उच्चारण-खंड के पश्चात तिरछी रेखा का चिह्न लगाना आवश्यक नहीं।

१०. रक्त = रक्' त
गुप्त = गुप्' त
किन्तु
सत्य = सत्' त्य
वाक्य = वाक्' क्य
क्यों ?

११. त्याग = त्याग
ध्यान = ध्यान
किन्तु
स्थान = अस्' थान
स्थिर = इस्' थिर
क्यों ?

१२. द्वित्व एवं स्वरागम की दशाओं का अध्ययन भी प्रस्तुत शास्त्र का विषय।

१३. अन् — अन
सम् — सम
के
उच्चारणान्तरों पर प्रकाश डालना भी प्रस्तुत शास्त्र के कर्त्तव्य क्षेत्र में।

१४. 'वाक्' और 'वाक्क्' के अन्तर को स्पष्ट करना भी।

१५. प्रस्तुत शास्त्र के अन्य विचारणीय विषय—
'ऋ-ष्' आदि, उच्चारण में लुप्त ध्वनियाँ;
'गयी-गई' आदि, तद्भवों की रूप स्थिरता;
तथा 'न्ह -म्ह -ल्ह ' के रूप में विकसित महाप्राण ध्वनियाँ

१६. विकसित ध्वनियों के अन्तर्गत
'ए-ओ' स्वरों के ह्रस्व रूप भी।

१७. संक्षेप में, प्रस्तुत शास्त्र के,
अनेक चिन्तनीय विषय;
अतः उसकी महत्ता और
आवश्यकता सर्वथा अक्षुण्ण।

सम्बन्ध-निर्देश

१, २ से ३, ४ से ६, १० से १२,
१३-१४, १५-१६, १७।

कुछ संज्ञायें

१. अ आ
इ ई
उ ऊ
ऋ ॠ
— ए ऐ
— ओ औ

—स्वर।

२. क ख ग घ ङ
च छ ज झ ञ
ट ठ ड ढ ण
त थ द ध न
प फ ब भ म
य र ल व
श ष स ह

—स्वरान्त व्यञ्जन।

३. क् ख् ग् घ् ङ्
च् छ् ज् झ् ञ्
ट् ठ् ड् ढ् ण्
त् थ् द् ध् न्
प् फ् ब् भ् म्
य् र् ल् व्
श् ष् स् ह्

—व्यञ्जन या शुद्ध व्यञ्जन

४. क् + अ = क

ख् + अ = ख

ग् + अ = ग

घ् + अ = घ

ङ् + अ = ङ

—आदि स्वरान्त व्यञ्जन।

५. क् + अ = क

क् + आ = का

क् + इ = कि

क् + ई = की

क् + उ = कु

—आदि स्वरान्त व्यञ्जन।

६. ख् + अ = ख

ख् + आ = खा

ख् + इ = खि

ख् + ई = खी

ख् + उ = खु

—आदि स्वरान्त व्यञ्जन।[१]

७. जिन व्यञ्जनों के अन्त में स्वर, वे स्वरान्त।

८. जिन व्यञ्जनों के अन्त में स्वर नहीं, वे शुद्ध।

९. स्वरान्त व्यञ्जनों की तुलना में, व्यञ्जनों को, 'शुद्ध व्यञ्जन' कहना अधिक उपयुक्त।

---

१. सूत्र ४, ५, ६ में 'व्यञ्जन-स्वर-मिलन-प्रक्रिया' दिखायी गयी है।

१०. उच्चारण की दृष्टि से,
स्वर स्वाधीन, किन्तु
व्यञ्जन पराधीन अर्थात्
स्वराधीन ध्वनियाँ ।

११. पराधीन होने से ही,
वर्णमाला के व्यञ्जनों में,
अकारका अनुबन्ध ।

१२. स्वर एवं स्वरान्त व्यञ्जन, अक्षर ।

१३. शुद्ध व्यञ्जन, अर्द्धाक्षर ।[१]

१४. स्वर एवं शुद्ध व्यञ्जन,
दोनों की बोधक संज्ञा 'वर्ण' ।

१५. वर्ण, किसी भाषा की मूल ध्वनियाँ ।

१६. स्वरान्त व्यञ्जन, दो ध्वनियों के
संयोग से निर्मित, अतः वे
'वर्ण' संज्ञा के अयोग्य ।

१७. 'ऋ' आदि लुप्त स्वरों का उच्चारण 'रि' आदि,
संयुक्त स्वर 'ऐ' का उच्चारण 'अ इ',
और 'औ' का उच्चारण 'अ उ' होने से,
वे भी वर्ण संज्ञा के अयोग्य ।

---

१. अक्षरों की तुलना में कभी-कभी शुद्ध व्यञ्जनों को अर्द्धाक्षर कहा जाता है । सामान्यतः इस संज्ञा की आवश्यकता नहीं है ।

विशेष—"ढाई अक्षर प्रेम का पढ़ै सो पण्डित होइ ।"

—कबीर

(प्रेम = प + रे + म)

१८. स्वर के आधार पर,
अक्षर की कल्पना;
किन्तु उसकी रचना,
प्रायः एक या अनेक
व्यञ्जन वर्णों को लेकर ही।

१९. प्रायः क्यों ?
शब्दों के आदि में,
अकेले स्वर का भी,
प्रयोग होने से।[1]

२०. शब्द—अक्षर —वर्ण
अ— अ —अ (नहीं)
न— न —न्+अ (नहीं)
सत्— सत् —स्+अ+त्
त्यज्—त्यज् —त्+य्+अ+ज्
अज—अ+ज —अ+(ज्+अ)
सन्त—सन्+त—(स्+अ+न्)+(त्+अ)
आदि।

२१. शब्द, एक या अनेक अक्षरों के।

२२. अक्षर, एक या अनेक वर्णों के।

२३. किसी शब्द में जितने स्वर, उतने अक्षर।

२४. एक स्वर, अनेक व्यञ्जनों का वाहक बन कर,
अनेक वर्णीय अक्षर के रूप में।

---

१. प्रस्तुत सूत्र तत्सम शब्दों की दृष्टि से है। हिन्दी के 'कई' आदि तद्भव शब्दों में, अकेले स्वर का प्रयोग शब्दान्त में भी।

२५. अक्षर परिगणन में, शब्दों के शुद्ध व्यञ्जन, किसी न किसी अक्षर के अन्तर्गत।

२६. स्तुति कर्म सत्
स्नान रक्त चित्
त्याग सत्य वाक्

२७. शब्दों के शुद्ध व्यञ्जन,
शब्दों के 'आदि-मध्य-अन्त' में,
सर्वत्र पाये जाने वाले।

२८. उच्चारण-दृष्टि से शुद्ध व्यञ्जनों की कुछ विशिष्ट समस्यायें।

२९. शुद्ध व्यञ्जनों के आधार पर, शब्दों के दो भेद—
(क) शुद्ध व्यञ्जनों से युक्त शब्द,
(ख) शुद्ध व्यञ्जनों से रहित शब्द।

३०. सरल होने से, सर्वप्रथम, शुद्ध व्यञ्जनों से रहित शब्द ही विचारणीय।

३१. शब्दों की रचना में,
'स्वर-स्वरान्त व्यञ्जन' एवं
'शुद्ध व्यञ्जन,' सभी का महत्व।

सम्बन्ध-निर्देश

१ से ६, ७ से ११, १२ से १७, १८ से २५, २६ से २८, २९-३०, ३१।

: ३ :

शुद्ध व्यञ्जनों से रहित शब्दों के उच्चारण एवं उच्चारण-खण्ड

१. अज = अज'[१]
कल = कल'
कुल = कुल'
बलि = बलि'

२. अजा = अजा'
कला = कला'
कली = कली'
वधू = वधू'

३. आदि = आदि'
काल = काल'
दीन = दीन'
शूल = शूल'।

---

१. अकारान्त शब्दों के पूर्वाक्षर पर बल देने से अन्त्य अकार का लोप, अतः "अज, कल, कुल, काल" आदि शब्दों के पूर्वाक्षर पर बल देना अनुचित। बलाघात की दशा में उक्त शब्दों का उच्चारण होगा—

S S S
अज् (= अज्), कल् (= कल्), कुल् (= कुल्), काल्
S
(काल्) आदि, जिसकी व्याख्या "उच्चारण सबलता" के प्रकरण में।

४. आशा = आशा'
काला = काला'
लीला = लीला'
नेता = नेता।'

५. दो अक्षर के शब्दों में,
केवल एक उच्चारण-खंड।

६. एक ही काल में, दो अक्षरों का,
उच्चारण सम्भव न होने से,
उच्चारण सदैव अनुक्रम पूर्वक।

७. अनुक्रम, एक अक्षर के कई वर्णों में भी।

८. 'क' आदि स्वरान्त व्यञ्जनों में,
पहले 'क्' फिर 'अ' का उच्चारण होने से,
अनुक्रम वहाँ भी विद्यमान।

९. अनुक्रम में अधिक से अधिक
दो अक्षरों का सम्पर्क, अतः
बड़े से बड़ा उच्चारण खण्ड भी
दो अक्षरों तक सीमित।

१०. सरल = स'रल
तरल = त'रल
सुमन = सु'मन
कुमुद = कु'मुद।

११. मानस = मा'नस
तामस = ता'मस
गायक = गा'यक
कोमल = को'मल।

१२. समान = स'मान
महेश = म'हेश
महीश = म'हीश
मधूक = म'धूक ।

१३. आकाश = आ'काश
पाताल = पा'ताल
कामारि = का'मारि
वातारि = वा'तारि ।

१४. सरला = सर'ला[1]
तरला = तर'ला
समता = सम'ता
मुरली = मुर'ली ।

१५. कामना = काम'ना
साधना = साध'ना
भावना = भाव'ना
तालिका = तालि'का

१६. यशोदा = यशो'दा
निराशा = निरा'शा
दुराशा = दुरा'शा
विरागी = विरा'गी ।

S
१. सरला = सर'ला = सर्'ला (आदि)
पूर्वाक्षर पर बल देने से, उच्चारण-खंड के अन्त में आये अकार का लोप, जो इष्ट नहीं, अतः यहाँ बलाघात वर्जित ।

१७. मायावी = मा'यावी
मेधावी = मे'धावी
एकाकी = ए'काकी
सेनानी = से'नानी ।

१८. तीन अक्षर के शब्दों में,
दो उच्चारण-खण्ड ।

१९. प्रथम पृथक्, यदि अन्तिम ह्रस्व ।[१]

२०. प्रथम दो एक साथ, यदि अन्तिम दीर्घ ।[२]

२१. तीनों के दीर्घ होने पर भी, प्रथम पृथक् ।[३]

२२. तृतीय नियम द्वितीय का निषेधक, किन्तु प्रथम का विस्तारक ।

२३. सहयोग = सह'योग
सहयोगी = सह'योगी
अनुराग = अनु'राग
अनुरागी = अनु'रागी ।

२४. मनसिज = मन'सिज
सरसिज = सर'सिज
भवदीय = भव'दीय
भवदीया = भव'दीया ।

२५. मनोहर = मनो'हर
मनोरथ = मनो'रथ
यशोधरा = यशो'धरा
तपोवन = तपो'वन

---

१. १० से १३ २. १४ से १६ ३ १७

२६. सहोदर = सहो'दर
सहोदरा = सहो'दरा
महोदया = महो'दया ।

२७. रामाधार = रामा'धार
चराचर = चरा'चर
भावाभाव = भावा'भाव
भेदाभेद = भेदा'भेद

२८. समुचित = समु'चित
अनुचित = अनु'चित
अनाचार = अना'चार
अनाधार = अना'धार

२९. मानसिक = मान'सिक
सामयिक = साम'यिक
नागरिक = नाग'रिक
नियमित = निय'मित ।[१]

३०. चार अक्षर के शब्दों में,
दो-दो अक्षरों के, दो उच्चारण-खण्ड ।

३५. सफलता = स' फल' ता
कोमलता = को' मल' ता
चतुरता = च' तुर' ता
सुगमता = सु' गम' ता

---

१. २३ से २९ तक के सूत्र, शब्द-रचना के आधार पर निर्मित अथवा संकलित किये गये हैं

३२. भावसूचक 'ता' के पृथक् उच्चारण होने से, चार अक्षर वाले शब्दों के तीन उच्चारण-खण्ड भी।

३३. भावसूचक 'ता' क्यों ?
सोम-लता = सोम' लता
तरु-लता = तरु' लता।

३४. भावसूचक न होने की दशा में, 'ता' अपने पूर्वाक्षर के साथ।

३५. भाव सूचक 'ता' के योग में, मूल शब्द के उच्चारण-खण्ड अविकृत, अतः खण्ड-वृद्धि आवश्यक।

३६. 'ता' की तुलना में, अर्थ की अपेक्षा से, प्रथम दो खण्डों की समीपता भी आवश्यक।

३७. 'सफलता' का 'सफ' लता' 'कोमलता' का 'कोम' लता' आदि उच्चारण, अर्थ-विकलता के कारण त्याज्य।

३८. 'सफ'लता' आदि उच्चारण प्रवाहहीन भी।

३९. उच्चारण-खण्ड, अर्थ-खण्ड से सर्वथा भिन्न नहीं।

४०. संध्यादि दशाओं में, अर्थ के जो अंश लुप्त, वे उच्चारण-खण्ड में भी अप्रकट।

४१. उच्चारण-खंड प्रायः अर्थ-खण्ड के अनुरूप या सन्निकट।

४२. परोपकार = प'रोप'कार
परोपकारी = प'रोप'कारी
अनुपयोगी = अ'नुप'योगी।

४३. समयोचित = सम'यो'चित
समयाभाव = सम'या'भाव
विचाराधीन = विचा'रा'धीन ।

४४. रामावतार = रामा'व'तार
ऐतिहासिक = ऐति'हा'सिक
पारलौकिक = पार'लौ'किक ।

४५. सेनाधिकारी = सेना'धिका'री
वासाधिकारी = वासा'धिका'री
परिचारिका = परि'चारि'का ।

४६. पाँच अक्षर के शब्दों में, तीन उच्चारण—खण्ड, जिनमें प्रथम दो या अन्तिम दो की समीपता से, तीन अक्षरों के नियम भी क्रियाशील ।[१]

४७. नागरिकता = नाग'रिक'ता
सामाजिकता = सामा'जिक'ता
नियमितता = निय'मित'ता

४८. 'उच्चारण-खण्ड-वृद्धि' की दृष्टि से भावसूचक 'ता का पाँच अक्षर के शब्दों पर कोई प्रभाव नहीं ।'

४९. गुणसूचक 'इक' या 'इत' का, भावसूचक 'ता' से सामीप्य होने से दूसरे-तीसरे उच्चारण-खण्डों की समीपता ।

५०. जीवनोपयोगी = जीव'नो' पयो'गी
समाजोपयोगी = समा'जो'पयो'गी

---

१. सूत्र ४२-४३ में प्रथम दो की समीपता और ४४-४५ में अन्तिम दो की।

नयनाभिराम = नय'ना भि'राम

गमनागमन = गम'ना' ग'मन

५१. छह अक्षर के शब्दों में, चार उच्चारण-खण्ड, जिनमें प्रथम दो और अन्तिम दो को समीपता में, तीन अक्षरों के नियम भी क्रियाशील।

५२. कथनोपकथन = कथ'नोप' क'थन

सरलातिसरल = सर'लाति' स'रल

गहनातिगहन = गह'नाति' ग'हन।

५३. सात अक्षर के शब्दों में, दो-दो अक्षरों के तीन, तथा अकेले अक्षर का एक उच्चारण-खण्ड; जिनमें प्रथम दो और अन्तिम दो की समीपता में, क्रमशः चार तथा तीन अक्षरीय शब्दों के नियम भी क्रियाशील।

५४. मूल शब्द प्रायः दो या तीन अक्षरों के।

५५. बड़े शब्द, समास, सन्धि या प्रत्यय जन्य।

५६. बड़े शब्द प्रायः उपशब्दों में विभाजित, फिर उनके उच्चारण-खण्डों का निर्धारण।

५७. रामावतार = रामा—व'तार

भेदोपभेद = भेदो—प'भेद

समयोचित = सम'यो—चित।

५८. विभाजन में सन्धि आदि के कारण, विकृत अंश ही अपने अर्थ-खण्ड से पृथक्।

५९. विभाजन में यथासम्भव प्रथम अर्थ-खण्ड को बनाये रख कर दूसरे अर्थ-खण्ड का निश्चय।

६०. भेदोपभेद

= भे' दोप——भेद

या

= भेदो'——प'भेद

में

अर्थ सन्निकटता से द्वितीय ही शुद्ध ।

६१. 'रामावतार' का 'रामा–अव'तार

'भेदोपभेद' का 'भेदो–उप'भेद

'समयोचित' का 'सम'यो–उ'चित

ऐसा उच्चारण दूषित ।

६२. अर्थचिन्तन से, सन्धि के लुप्त अंशों को, उच्चारण मे प्रकट कर लेना, अनुचित ।

६३. अनु = अनु'

अनुज = अ'नुज

अनुजा = अनु'जा

अनुगत = अनु'गत

६४. कलेवर-वृद्धि से विभिन्न नियमों के अन्तर्गत परिवर्तन और उच्चारण-खण्डों का निर्धारण ।

६५. उच्चारण-खण्डों का नियामक तत्त्व, प्रवाह ।

सम्बन्ध-निर्देश

१ से ९, १० से १३, १४ से १६, १७, १८ से २२, २३ से ३०, ३१ से ३८, ३९ से ४१, ४२ से ४९, ५०-५१, ५२-५३, ५४-५५, ५६ से ५९, ६०, ६१-६२, ६३-६४, ६५ ।

शुद्ध व्यञ्जनों का उच्चारण

१. सत् = सत्'
चित् = चित्'
सम् = सम्'
वाक् = वाक्' ।

२. महत् = म'हत्
जगत् = ज'गत्
सरित् = स'रित्
राजन् = रा'जन् ।

३. धर्म = धर्'म
कर्म = कर्'म
रक्त = रक्'त
सन्त = सन्'त ।

४. संस्कार = संस्'कार
संस्कृति = संस्'कृति
भर्त्सना = भर्त्'सना
लक्ष्मी = लक्ष्'मी ।

५. शुद्ध व्यञ्जनों का उच्चारण
अपने पूर्वाक्षर के साथ ।

६.	स्तर	=	अस्'तर
	स्तेय	=	अस्'तेय
	स्थान	=	अस्'थान
	स्नान	=	अस्'नान
७.	स्थिल	=	इस्'थिल
	स्थिर	=	इस्'थिर
	स्मित	=	इस्'मित
	स्निग्ध	=	इस्'निग्'ध ।

८. पूर्वाक्षर के अभाव में, आद्य शुद्ध व्यञ्जनों के लिए स्वरागम ।

९.	त्याग	=	त्याग'
	ध्यान	=	ध्यान'
	ख्याति	=	ख्याति'
	ज्योति	=	ज्योति' ।
१०.	ग्राम	=	ग्राम'
	ह्रास	=	ह्रास'
	क्रीत	=	क्रीत'
	श्रीश	=	श्रीश'
११.	श्लेष	=	श्लेष'
	श्लील	=	श्लील'
	क्लेश	=	क्लेश'
	क्लान्त	=	क्लान्'त ।
१२.	द्वेष	=	द्वेष'
	द्वार	=	द्वार'

द्वारा = द्वारा'
ज्वाला = ज्वाला' ।

१३. यण् वाहक, अतः उनसे संयुक्त आद्य शुद्ध व्यञ्जनों के लिए स्वरागम नहीं ।

१४. वस्तुतः स्पर्शादि के अवाहक होने से ही, आद्य शुद्ध व्यञ्जनों के लिए स्वरागम ।

१५. इ से य्
उ से व्
ऋ से र्
ऌ[1] से ल्

१६. स्वर जन्य होने से 'यणों' की वाहकता स्वाभाविक ।

१७. व्यञ्जन होने से, वाहक यणों का भी स्वरान्त होना आवश्यक ।

१८. त्र्यूषण = त् र् यू' ष ण
त्र्यम्बक = त् र् य म्'बक

१९. यदि कई यण् एक साथ हों, तो केवल अन्तिम का स्वरान्त होना आवश्यक ।

२०. 'त्र्यूषण' आदि में, शुद्ध रकार भी, अपने पूर्व का वाहक, इससे शुद्ध यणों की वाहकता सिद्ध ।

२१. क्त्वा = अक्'त्वा ।

---

१. 'ऌ' वैदिक भाषा का एक स्वर, जो अब पूर्णतः लुप्त ।

२२. 'क्त्वा' में तकार के अवाहक होने से, प्रथम के लिए स्वरागम और यण् केवल अपने ठीक पूर्व का वाहक।

२३. त्यक्त = त्यक्'त
स्वल्प = स्वल्'प
प्राप्त = प्राप्'त
क्लान्त = क्लान्'त।

२४. स्वर अपने अनुगामी, यण् अपने पूर्वगामी, शुद्ध व्यञ्जनों का वाहक, इस प्रकार एक स्वरान्त यण्, उभयपक्षीय शुद्ध व्यञ्जनों का वाहक।

२५. स्नेह = स्नेह'
स्नेही = स्नेही'
स्नेहन = स्ने'हन
स्नेहक = स्ने'हक।

२६. स्नान = अस्'नान या स्नान
स्नात = अस्'नात या स्नात
स्नायु = अस्'नायु या स्नायु
स्निग्ध = इस्'निग्'ध या स्निग्'ध

२७. 'स्नेह' आदि कुछ शब्दों में, नकार अपने आद्य शुद्ध व्यञ्जनों का पूर्ण वाहक।

२८. 'स्नान' आदि में नकार की वाहकता वैकल्पिक।

२९. आधुनिक उच्चारण में, नकार की वाहकता का उत्तरोत्तर विकास, और उसी अनुपात में स्वरागम का ह्रास ।

३०. आधुनिक उच्चारण में, अवाहक के इकारान्त या ईकारान्त होने पर इकार का और अन्य दशाओं में अकार का आगम ।[१]

३१. स्तेय — चोरी करना,
अस्तेय — चोरी न करना ।

३२. स्थूल — मोटा,
अस्थूल — मोटा न होना ।

३३. स्पष्ट — साफ,
अस्पष्ट — साफ न होना ।

३४. निषेधसूचक होने से, अकार का आगम अनर्थकारी ।

३५. स्कूल = इस्'कूल
स्टेशन = इस्'टे'शन
स्टूल = इस्'टूल
स्टेट = इस्'टेट ।

३६. स्वरागम अंग्रेजी आदि विदेशी भाषाओं में भी ।

३७. स्वरागम की दृष्टि से, अकार की अपेक्षा इकार, अधिक उपयुक्त ।

३८. स्फीत = अस्'फीत, चिन्तनीय ।

---

१. इकार के आगम के लिए, इसी प्रकरण का सूत्र ७ और अकार के आगम के लिए सूत्र ६ अवलोकनीय ।

३९. वर्तमान नियमों के अन्तर्गत ही, 'स्फीत' का शुद्धोच्चारण 'इस्-फीत' न कि 'अस्-फीत'।

४०. शुद्ध व्यञ्जनों के उच्चारण में, 'साहचर्य' के शास्त्रीय नियम विद्यमान।

सम्बन्ध-निर्देश

१ से ५, ६ से ८, ९ से १३, १४, १५ से २०, २१-२२, २३-२४, २५ से ३०, ३१ से ३४, ३५-३६, ३७, ३८-३९, ४०।

: ५ :

उच्चारण-सबलता

			। ।
१.	कर	=	क र
			ऽ ।
	काल	=	का ल
			। ऽ
	कला	=	क ला
			ऽ ऽ
	काला	=	का ला
			ऽ ।
२.	रक्त	=	र क्' त
			ऽ ।
	गुप्त	=	गुप्' त
			ऽ ।
	धर्म	=	धर्' म
			ऽ ।
	सन्त	=	सन्' त ।

३.	लघु	=	।
	गुरु	=	ऽ

४. "ह्रस्वं लघु,
संयोगे गुरु,
दीर्घं च।"[1]

---

1. अष्टाध्यायी १।४। १०,११,१२॥

'ह्रस्व स्वर की 'लघु' संज्ञा,
संयोग में उसकी 'गुरु' संज्ञा,
दीर्घ स्वर भी 'गुरु' संज्ञक।

५. स्वर व्यवधान रहित, परस्पर मिले व्यञ्जनों की संज्ञा 'संयोग'।[1]

६. 'संयोगे' में लगी सप्तमी विभक्ति से, उक्त पद के परत्व और उस पद के पूर्व होने वाले कार्य के कार्य-स्थल का संकेत।[2] इस प्रकार 'संयोगे' पद पूर्णतः पारिभाषिक।

७. 'संयोगे गुरु' में अनुवृत्ति से प्राप्त 'ह्रस्व' अर्थात् 'ह्रस्व स्वर' ही कार्य-स्थल, अतः सम्पूर्ण सूत्र का अर्थ होगा—

"ह्रस्व स्वर की गुरु संज्ञा, यदि उसके परे संयोग हो।"

८. गुरु संज्ञा होने से 'रक्त' आदि में पूर्व स्वर 'सबलतर'।

९. संयोग में शुद्ध व्यञ्जनों की उपलब्धि, अतः संयोग परे होने का व्यापक अर्थ शुद्ध व्यञ्जन परे होने पर।

१०. 'ह्रस्व-दीर्घ' उच्चारण काल पर आधारित स्वर के दो भेद; किन्तु 'लघु-गुरु' प्रयत्न पर आधारित स्वर के दो भेद।

---

१. हलोऽनन्तराः संयोगः ॥ अ० १।१।७ ॥

२. तस्मिन्निति निर्दिष्टे पूर्वस्य ॥ अ० १।१।६६ ॥ (उसमें, ऐसा निर्दिष्ट होने पर पूर्व के स्थान पर)

११. शुद्ध व्यञ्जन परे होने पर,
पूर्व ह्रस्वाक्षर भी सबल प्रयत्न के कारण गुरु।

१२. शुद्ध व्यञ्जन या व्यञ्जनों के, वाहक अक्षरों पर बलाघात, और वे ह्रस्व होकर भी 'गुरु'।

१३. अन्—अन
सम्—सम।[1]

१४. गुरु नियम से—

		ऽ
अन्	=	अन्
		ऽ
सम्	=	सम्

१५. लघु नियम से—

		। ।
अन	=	अन
		। ।
सम	=	सम।

१६. अन से अन्,
सम से सम्,
सबलतर।

---

१. अन्—मन् (सोचना), तन् (फैलाना)
अन—मन (अन्तःकरण), तन (शरीर)
सम्—सम्भव, सम्मान
सम—समतल, समरस आदि।

१७. मान्—मान
वान्—वान
आदि के उच्चारण भी एक जैसे नहीं।

S
१८. मान् = मान्

S
वान् = वान्

और

S ।
मान = मा न

S ।
वान = वा न।[1]

१९. यद्यपि दीर्घ स्वर, प्रत्येक दशा में गुरु, किन्तु शुद्ध व्यञ्जनों का वाहक दीर्घ, अपने सामान्य दीर्घ से सबलतर।

S ।
२०. क्रम = क्‌र म

S ।
व्रत = व्‌र त।

२१. सबल प्रयत्न से, अनुगामी ह्रस्व को भी, 'गुरु' संज्ञा मानना उचित।

---

१. मान्—श्रीमान्, बुद्धिमान्
मान—अनुमान, उपमान
वान्—रूपवान्, गुणवान्
वान—वान (सूखा फल) वानप्रस्थ (आश्रम विशेष)

२२. लिखने में, रकार के चार रूप—

कर	कर्म	क्रम	राष्ट्र
पर	पर्व	प्रथा	पौण्ड्र
र	ॅ	/	^
र्+अ	र्	र्+अ	र्+अ।

२३. रकार का 'छत्र रूप' शुद्ध, शेष स्वरान्त।

२४. रेखा और ऊर्ध्वदिशासूचक कोण रकार अपने पूर्व आये शुद्ध व्यञ्जनों के वाहक।

२५. ट वर्ग के नीचे रेखा भ्रामक, अतः कोण से उसका संकेत।

२६. उच्चारण में रकार की चार दशाएँ—

कर	रक्त	कर्म	क्रम
रस	परन्तु	पर्व	राष्ट्र
र	र् (+क्)	ॅ	', ^ (क्र, ट् र्)

अर्थात् क्रमशः "स्वाधीन", 'पर' वाहक, वहनीय एवं पूर्व वाहक" दशाएँ।

२७. (क) रक्त = रक्'त
परन्तु = प'रन्'तु

(ख) क्रम = क्र'म
राष्ट्र = राष्'ट्र

२८. पूर्व शुद्ध व्यञ्जनों का वाहक रकार, पर शुद्ध व्यञ्जनों के रकार से सबलतर।[1]

२७-क से २७ ख

२९. अतः = अतह् = अऽतह्
प्रातः = प्रातह् = प्राऽतह्
स्वतः = स्वतह् = स्वऽतह्

३०. विसर्ग अन्त्य शुद्ध हकार।

३१. शुद्ध व्यञ्जनों का उच्चारण साहचर्य नियम से बलाघातपूर्वक।

सम्बन्ध-निर्देश

१ से १२, १३ से १६, १७ से १९, २० से २१, २२ से २८, २९ से ३०, ३१।

द्वित्व एवं संविभाग

१. सत्य = सत्'त्य
पूज्य = पूज्'ज्य
वाक्य = वाक्'क्य
योग्य = योग्'ग्य

२. रुद्र = रुद्'द्र
शुक्र = शुक्'क्र
पुत्र = पुत्'त्र
पौत्र = पौत्'त्र ।

३. शुक्ल = शुक्'क्ल
आम्ल = आम्'म्ल
विप्लव = विप्'प्लव
विक्लान्त = विक्'क्लान्'त ।

४. अद्वैत = अद्'द्वैत
विश्व = विश्'श्व
ईश्वर = ईश्'श्वर
विद्वान् = विद्'द्वान् ।

५. स्वर—यण् मध्यग, अकेले शुद्ध व्यञ्जन का द्वित्व ।

६. संख्या = सं'ख्या
संध्या = सं'ध्या

मत्स्य = मत स्य
विन्ध्य = विन्'ध्य ।

७. मन्त्र = मन्'त्र
तन्त्र = तन्'त्र
शास्त्र = शास्'त्र
संग्रह = स'ग्रह ।

८. पार्श्व = पार्'श्व
सान्त्वना = सान्'त्वना ।

९. दो की दशा में, प्रथम पूर्व के साथ, द्वितीय पर के साथ ।

१०. कार्त्स्न्य = कार्त्स्'न्य ।[1]

११. दो से अधिक की दशा में यण् केवल अपने ठीक पूर्व का वाहक ।

१२. स्वातन्त्र्य = स्वा'तन्'त्'र्'य
पारतन्त्र्य = पार'तन्'त्'र्'य ।

१३. 'स्वातन्त्र्य' आदि में, शुद्ध रकार के भी वाहक होने से, स्वरान्त यण् केवल अपने ठीक पूर्व का ही वाहक नहीं, तकार का भी वाहक ।

१४. 'पूर्व-पर' दोनों की वाहकता से द्वित्व ।

१५. 'पूर्व-पर' दोनों की सन्निकटता, केवल अकेले शुद्ध व्यञ्जन को प्राप्त, अतः द्वित्व केवल ऐसी ही दशा में ।

---

१. इसमें तकार निर्बलतम ।

१६. 'पूर्व-पर' दोनों की वाहकता से, दो या दो से अधिक शुद्ध व्यञ्जनों का संविभाग।

१७. संविभाग = सम् विभाग = सम्यक् विभाग।

१८. जिस विभाग में, उच्चारण प्रवाह पूर्ण, वही सम्यक् या संविभाग।

१९. 'द्वित्व' से दो शुद्ध व्यञ्जनों की प्राप्ति, अतः संविभाग वहाँ भी।

२०. 'द्वित्व' में संविभाग निहित होने पर भी 'द्वित्व', संविभाग के अन्तर्गत नहीं।

२१. जिस प्रकार 'संविभाग' का उद्देश्य, उच्चारण को 'प्रवाह पूर्ण' बनाना, उसी प्रकार 'द्वित्व' का भी। अतः उद्देश्य की दृष्टि से वे समान स्तरीय ही।

२२. द्वित्व के अभाव में—

सत्य = सत्'य या स'त्य

पूज्य = पूज्'य या पू'ज्य

आदि।

२३. संविभाग के अभाव में—

संख्या = संख्'या

संध्या = संध्'या

आदि।[1]

२४. 'द्वित्व' और 'संविभाग' के अभाव में, उच्चारण प्रवाहहीन, जो कष्टकर।

१. सूत्र २२ के समान विकल्प दशा सम्भव नहीं।

२५. मुख्य = मुख्'ख्य = मुक्'ख्य
शीघ्र = शीघ्'घ्र = शीग्'घ्र ।

२६. तथ्य = तथ्'थ्य = तत्'थ्य
मध्य = मध्'ध्य = मद्'ध्य ।

२७. लभ्य = लभ्'भ्य = लब्'भ्य
सभ्य = सभ्'भ्य = सब्'भ्य ।

२८. दो वर्गीय महाप्राण व्यञ्जनों का संयोग सम्भव न होने से, द्वितीय वर्ण का द्वित्व अपने प्रथम वर्ण से, एवं चतुर्थ का अपने तृतीय वर्ण से ।[1]

२९. विश्व = विश्'श्व
मनुष्य = म'नुष्'ष्य
सदस्य = स'दस्'स्य ।

३०. 'शर्' महाप्राणों का द्वित्व अपने ही रूपों से ।[2]

३१. सह्य = सय्'ह्य
असह्य = अ'सय्'ह्य ।

३२. हकार का द्वित्व, उसके अनुगामी यण् के शुद्ध रूप से ।

३३. मूल महाप्राण होने से, हकार के निजी द्वित्व का सर्वथा अभाव ।

३४. हकार, वर्गीय महाप्राणों का स्रष्टा, अतः वह मूल महाप्राण ।

१. वर्गीय महाप्राण क्यों ? इसका उत्तर अगले सूत्र में ।
२ 'श ष स'

३५. 'आह्वान' का 'आह्'वान' जैसा विभक्तोच्चारण, अनुगामी यण् के द्वित्व से 'आव्'ह्वान' जैसा होने योग्य।

३६. दो समान यणों की संयोग दशाएँ—

य् + य = य्य
र् + र = र्र
ल् + ल = ल्ल
व् + व = व्व

३७. दो असमान यणों की संयोग दशाएँ—

(क) र् + य = र्य
ल् + य = ल्य
व् + य = व्य

(ख) य् + र = य्र
ल् + र = ल्र
व् + र = व्र

(ग) य् + ल = य्ल
र् + ल = र्ल
व् + ल = व्ल

(घ) य् + व = य्व
र् + व = र्व
ल् + व = ल्व।

३८. शय्या = शय्'या
उल्लास = उल्'लास
उल्लेख उल्'लेख

३९. समान यणों के संयोग में द्वित्व नहीं।

४०. दुर्लभ = दुर्'लभ
निर्लेप = निर्'लेप
निर्लिप्त = निर्'लिप्'त।

४१. गर्व = गर्'व
पर्व = पर्'व
सर्व = सर्'व।

४२. लकार या वकार के संयोग में, रकार को द्वित्व नहीं।

४३. आर्य = आर्'र्य
तुल्य = तुल्'ल्य
काव्य = काव्'व्य।

४४. यकार के संयोग में, असमान यणों का द्वित्व पूर्ववत्।

४५. तीव्र = तीव्'व्र
पतिव्रता = प'तिव्'व्रता।

४६. रकार के संयोग में, वकार का द्वित्व भी पूर्ववत्।[१]

४७. दो असमान यणों के संयोग की अन्य परिस्थितियाँ नगण्य, अतः उनके लिए नियम भी अनावश्यक।

४८. संयम = सं'यम
संरक्षक = सं'रक्षक

---

१ विलोम परिस्थिति में सूत्र ४२ के अनुसार द्वित्व नहीं

संलाप = स'लाप
सवाद = सं'वाद

४९. = अनुस्वार ।

५०. यण् के संयोग में अनुस्वार को द्वित्व नहीं ।

५१. अनुस्वार, शुद्ध नासिक्य व्यञ्जन, अतः उसके सम्बन्ध में नियम बनाना आवश्यक ।

५२. द्वित्व की परिस्थितियों में, द्वित्व न होने पर, निषेध आवश्यक ।

५३. द्वित्व न होने की दशा में, शुद्ध व्यञ्जन केवल पूर्वाक्षर के साथ ।

५४. भटक्यो = भट'क्यो
चाख्यो = चा'ख्यो
धरचो = ध'रचो
उजारचो = उजा'रचो ।[1]

---

१. 'चार पहर वंसीवट भटक्यो ।'
'जिन मधुकर अंबुज रस चाख्यो ।'
'धरचो स्याम हँकार ।'
—'सूरसागर'
'कानन उजारचो अब नगर उजारी है ।'
कवितावली

५५. व्रजभाषा काव्य में प्रयुक्त, 'भटक्यो' आदि शब्दों में भी द्वित्व का अभाव, किन्तु ऐसी दशा में, शुद्ध व्यंजन के पूर्वाक्षर के साथ न होकर, अनुगामी अक्षर के साथ।[१]

५६. 'धरयो' आदि में—
र्+यो='र्यो' क्यों नहीं ?

५७. 'धरयो' आदि में—
र्+यो = 'र्‍यो' साभिप्राय,
इससे 'द्वित्व' एवं 'पूर्व साहचर्य' दोनों का निषेध।

५८. 'सर्व' आदि में भी रकार के 'द्वित्व' का अभाव किन्तु रकार पूर्वाक्षर के साथ; 'धर्‍यो' आदि मे उसका भी निषेध इष्ट, क्योंकि वह अनुगामी अक्षर के साथ। अतः 'र्‍यो' साभिप्राय।

५९. उद्वेग = उद्-वेग
अन्वेषण = अन्-वे'षण।

६०. अभिव्यक्ति = अभि-व्यक्'ति
पूर्वाभ्यास = पूर्'वा-भ्यास।

६१. सामाजिक या सान्धिक शब्दों के विभाग से द्वित्व का लोप।

६२. हरि-द्वार = ह'रिद्'द्वार
वेद-व्यास = वे'दव्'व्यास।

---

१ तद्भव शब्दों में सूत्र १४ का निषेध

६३. राज-द्वार = रा'जद्'द्वार या राज-द्वार
ओत-प्रोत = ओ'तप्'प्रोत या ओत-प्रोत ।

६४. राम-प्रसाद = राम-प्र'साद
शिला-न्यास = शिला-न्यास ।

६५. 'हरि-द्वार' ऐसे सामासिक शब्दों में, द्वित्व विद्यमान; 'राज-द्वार' ऐसे शब्दों में ह्रासोन्मुख, 'राम-प्रसाद' ऐसे शब्दों में पूर्णतः लुप्त ।

६६. उच्च = उच्'च
अन्न = अन्'न
भिन्न = भिन्'न
उन्नति = उन्'नति ।

६७. लज्जा = लज्'जा
सज्जन = सज्'जन
सत्ता = सत्'ता
महत्ता = म'हत्'ता ।[1]

६८. समान व्यञ्जनों के संयोग में द्वित्व नहीं, क्योंकि शुद्ध व्यञ्जन केवल पूर्वाक्षर के साथ ।

६९. 'उच्च' आदि में 'द्वित्व' की परिस्थितियाँ भी नहीं ।

७०. 'उच्च' आदि में 'द्वित्व' नहीं, 'द्वित्वाभास'— द्वित्व का आभास मात्र ।

७१. तत्त्व = तत्'त्व
सत्त्व = सत्'त्व

---

१. (त्+त=त्त)

संन्यास = सन्‌न्यास ।

७२. 'तत्त्व' आदि में विद्यमान द्वित्व आर्थी ।

७३. 'आर्थी द्वित्व', शब्दार्थ के द्योतक ।

७४. 'आर्थी द्वित्व', 'उच्चारणीय द्वित्व' से पृथक् होने के योग्य ।

७५. साहचर्य की विशिष्ट परिस्थितियों में ही द्वित्व और संविभाग, अतः ये नियम उसके अन्तर्गत ।[१]

सम्बन्ध-निर्देश

१ से ५, ६ से ९, १०-११, १२-१३, १४ से २१, २२ से २४, २५ से २८, २९-३०, ३१ से ३५, ३६, ३७, ३८-३९, ४० से ४२, ४३ से ४७, ४८ से ५१, ५२ से ५८, ५९ से ६१, ६२ से ६५, ६६ से ७०, ७१ से ७४, ७५ ।

---

१. इस अन्तिम सूत्र से, प्रस्तुत प्रकरण का सम्बन्ध पिछले दो प्रकरणों से सूचित किया गया है। प्रकरण ४-५-६ में शुद्ध व्यञ्जनों का विवेचन होने से, ये सभी परस्पर एक-दूसरे से आबद्ध हैं ।

कुछ वैकल्पिक शब्द तथा उनके उच्चारण

१. कर्ता — कर्त्ता
कर्तव्य — कर्त्तव्य

आदि, शब्दों का
वैशिष्ट्य ज्ञेय।

२. विकल्प से बोले या लिखे जाने वाले शब्द ही, वैकल्पिक शब्द।

३. कर्ता = कर्ता
कर्तव्य = कर्तव्य

किन्तु

कर्त्ता = कत्ता = कर्त्ता
कर्त्तव्य = कत्तव्य = कर्त्तव्य
(त्+त् = त्त)[१]

---

१. दो तकारों का यह संयोग, स्पष्ट रूप से ध्यान में न आने के कारण, पर्याप्त भ्रामक, किन्तु उन्हें 'त्त' के रूप में प्रकट करने से भी लकार (ल) के भ्रम की संभावना, अतः प्रत्येक दशा में सावधानी की अपेक्षा।

४. 'कर्ता' की दशा में पूर्वाक्षर केवल शुद्ध रकार का, किन्तु 'कर्त्ता' की दशा में वह रकार तथा तकार दो शुद्ध व्यञ्जनों का वाहक।[१]

५. उच्चारण-दृष्टि से शुद्ध व्यञ्जन प्रायः अपने 'संयोग' से पृथक्, अतः उच्चारण-शास्त्र की दृष्टि से 'संयोग' संज्ञा भी प्रायः निरर्थक।

६. प्रायः क्यों? यण्-संयोग, अर्थात् 'ध्यान, संख्या, वाक्य' आदि शब्दों में संयोग के बहुत कुछ वास्तविक होने से।

७. संधि-नियमों से, 'कर्ता—कर्त्ता', 'कर्तव्य-कर्त्तव्य' ये दोनों रूप सिद्ध एवं शुद्ध।[२]

८. कर्त्ता = कर्‌त्‌'ता
कर्त्तव्य = कर्‌त्‌'तव्‌'व्य।

९. 'कर्त्ता' आदि में, शुद्ध रकार के पश्चात् आये, शुद्ध तकार अत्यन्त निर्बल, अतः वे लघुतर रूप में लिखे जाने के योग्य।

१०. 'कर्त्ता' आदि में शुद्ध रकार को, स्वरान्त तकार के साथ बोलने का प्रयास फलतः एक लघुतर तकार की श्रुति।

११. 'कर्ता' आदि में 'कर्' पर कुछ स्पष्ट विराम, फलतः तकार की श्रुति नहीं।

१२. वैकल्पिक उच्चारण, वैकल्पिक प्रयत्नों के फल।

---

१. पूर्वाक्षर की यह वाहकता, अब तक विवेचित नियमानुसार ही।

२. 'अचो रहाभ्यां द्वे ॥ अ० ८।४।४६ ॥'

१३. कार्तिक — कात्तिक

वार्तिक — वात्तिक

पूर्ववत् ।[1]

१४. कर्म — कर्म्म

धर्म — धर्म्म

पूर्ववत् ।[2]

१५. अर्ध — अर्द्ध (अर्द्‌ध)

अर्धक — अर्द्धक (अर्द्‌धक ।

कुछ वैशिष्ट्य[3] के साथ, पूर्ववत् ।[4]

---

१. कार्'तिक ; कार्त्'तिक

वार्'तिक ; वार्त्'तिक ।

२. कर्'म ; कर्म्'म

धर्'म ; धर्म्'म ।

३. "यहाँ 'ध्' के स्थान पर 'द्' होना ही कुछ और वैशिष्ट्य, जो संधि नियमों के अन्तर्गत । 'झलां जश् झशि । अ० ८।४।५३ ।"

४. अर्'ध ; अर्ध्'ध = अर्द्'ध = अर्द्'ध

अर'धक ; अरध'धक = अरद'धक = अर्द 'धक ।

१६. शुद्ध रकार के पश्चात् होनेवाले श्रुति में, वस्तुतः अनुगामी व्यञ्जन के द्वित्व का वास ।[1]

१७. आर्य — आर्य्य
कार्य — कार्य्य ।

१८. आर्य = आर्'रय
कार्य = कार्'रय

किन्तु

आर्य्य = आर्य्'य (आर्य्'य)
कार्य्य = कार्य्'य (कार्य्'य)

अर्थात्

द्वितीय दशा में रकार के द्वित्व का अभाव और दोनों शुद्ध व्यञ्जन पूर्वाक्षर के साथ ।

१९. 'आर्य' आदि शब्दों में, रकार का उच्चारणीय द्वित्व विद्यमान; किन्तु 'आर्य्य' आदि में उसका लोप ।

२०. 'आर्य्य' आदि में दोनों शुद्ध व्यञ्जन पूर्वाक्षर के साथ, अतः संविभाग-नियम भी क्रियाशील नहीं ।

२१. रकारानुगामी द्वित्व में द्वित्व का शुद्ध व्यञ्जन सदैव रकार के साथ, फलतः दोनों ही पूर्वाक्षर पर ही निर्भर ।[2]

२२. वृत — वृत्त
वृतान्त — वृत्तान्त ।

---

१. शुद्ध रकार का अनुगामी व्यञ्जन स्वरान्त किन्तु द्वित्व केवल व्यञ्जन अंश का । वाक्य (वाक्'क्य) का उच्चारणीय द्वित्व इस द्वित्व से बहुत कुछ पृथक् ।

२. 'र्य्य' की दशा में, य्, य के साथ नहीं, इसकी पुष्टि एक अन्य (६।३८) नियम से भी ।

२३. वृत = वृत
वृतान्त = वृ'तान'त

किन्तु

वृत्त = वृत्'त
वृत्तान्त = वृत्'तान्'त

२४. रकार के समान, ऋकार के पश्चात् 'वृत—वृत्त' आदि का विकल्प भी उचित।[१]

२५. वाक्—वाक्क्[२]

का

अन्तर विचारणीय

२६. 'वाक्क्' में पूर्वाक्षर पर अवलम्बित, एक जैसे दो शुद्ध व्यञ्जनों के उच्चारण की, बिलकुल नयी समस्या।

२७. 'वाक्' पर पहुँची श्वास जब झटके से बहिर्गत, तब 'एक और' 'क्' का जन्म जो 'वाक्क्' के रूप में व्यक्त।[३]

२८. मात्र 'वाक्' की दशा में श्वास सामान्य रूप से बहिर्गत।

२९. उच्चारण-शैथिल्य से 'वाक्क् = वाक्क = वाक्'क' अर्थात् द्वितीय 'क्' स्वरान्त होकर पृथक् खण्ड मे, जो इष्ट नहीं।

---

१. यहाँ 'ऋकार' का प्रयोग ह्रस्व और दीर्घ दोनों के अर्थ में।
२. 'अनचि च।' अ० ८।४।४७।
३. 'एक और' का अर्थ 'एक अन्य'। यहाँ 'और' संयोजक न... विशेषण है।

३०. राष्ट्र—राष्ष्ट्र ।[1]

३१. राष्ट्र = राष्'ट्र
राष्ष्ट्र = राष्ष्'ट्र ।

३२. 'राष्ष्' का उच्चारण 'वाक्क्' के समान इष्ट ।

३३. इन्द्र—इन्न्द्र ।[2]

३४. इन्द्र = इन्'द्र
इन्न्द्र = इन्न्'द्र ।

३५. 'इन्न्' भी 'वाक्क्'-वत् ।

३६. इन्न् = इन्न् (इन्न्)
अर्थात् नकार का दीर्घकालिक उच्चारण भी सम्भव ।[3]

३७. दीर्घ नकार की कल्पना से इन्न्'द्र का उच्चारण सुगम ।

३८. अन्—अन्न्
सम्—सम्म्
उल्—उल्ल्
निस्—निस्स्
दुस्—दुस्स् ।

१-२. त्रि प्रभृतिषु शाकटायनस्य ॥ अ० ८।४।५० ॥

३. चिह्नों के अभाव में यहाँ रेखा कोष्ठक से, द्वित्व के स्थान पर, दीर्घत्व का बोध

३९. ह्रस्व स्वर के पश्चात्, 'न्, म्, ल्, स्' आदि के अल्प एवं दीर्घकालिक दोनों ही उच्चारण सम्भव, अतः इन व्यञ्जनों के दीर्घत्व की कल्पना भी सरल।[1]

ऽ ऽ_
४०. अन्न = अन्'न या अन्न्'न

ऽ ऽ_
सम्मान = सम्'मान या सम्म्'मान

ऽ ऽ_
उल्लेख = उल'लेख या उल्ल्'लेख

ऽ ऽ
दुस्साहस = दुस्'साहस या दुस्स'सा'हस (आदि)।

ऽ ऽ_
४१. सन्त = सन्'त या सन्न्'त

ऽ ऽ_
सम्भव = सम्'भव या सम्म्'भव

ऽ ऽ_
तुल्य = तुल्'ल्य या तुल्ल'ल्य

ऽ ऽ_
निस्तेज = निस्'तेज या निस्स्'तेज

४२. नकारादि का दीर्घत्व, अनुगामी व्यञ्जन के भिन्न होने पर भी।

४३. भाषा-विज्ञान में भी व्यञ्जनों का 'दीर्घत्व' सिद्ध; किन्तु उसकी वास्तविक परिस्थितियाँ 'अन्' आदि दशाओं में कुछ व्यञ्जनों तक सीमित।

---

१. इस सूची में 'ङ श ष' भी।

४४. परिनिष्ठित भाषा में, व्यञ्जनों का प्रायः दीर्घ उच्चारण इष्ट नहीं, अतः

अन् = अन्न् (अन्न्)

सम् = सम्म् (सम्म्)

तुल् = तुल्ल् (तुल्ल्)

निस् = निस्स् (निस्स्)

अर्थात्

उच्चारण-दृष्टि से दोनों एक जैसे।

४५. अन = अ न

किन्तु

अन् = अन् = अन्न्।

४६. बलाघात के कारण 'अन्', अन से पृथक् और सबल।

४७. 'अन्' के उच्चारण में बलाघात केवल 'अ' पर ही नहीं, उसका प्रभाव अनुगामी 'न्' पर भी।

४८. बलाघात से प्रभावित 'न्' ही 'न्न्' जो उच्चारण-शास्त्र की दृष्टि से एक पृथक् लिपि चिह्न के योग्य।[१]

---

१. यहाँ अन्न्, सम्म् आदि पर लगे चाप से उसका बोध।
यहाँ अर्थात इस शास्त्र में

इन्द्र = इन्न्'द्र (द्वित्व)

इन्द्र = इन्न्'द्र (दीर्घत्व)

इन्द्र = इन्न्'द्र । (बलत्व)

पूर्वाक्षर पर अवलम्बित, दो-एक जैसे शुद्ध व्यञ्जनों के, उच्चारण की तीन सम्भावनाएँ—'द्वित्व; दीर्घत्व, बलत्व ।'

वाक् – वाक्क्

इन्द्र – इन्न्द्र (इन्न्'द्र)

राष्ट्र – राष्ष्ट्र (राष्ष्'ट्र)

आदि, विकल्पों में 'हिन्दी' और कदाचित् 'संस्कृत' की दृष्टि से भी एक मात्र प्रथम रूप ही ग्राह्य; उनका द्वितीय रूप केवल ऐतिहासिक छानबीन के योग्य ।

उच्चारण की सभी विशिष्टताओं को नित्य की लिखित भाषा में प्रकट करना, प्रायः सम्भव नहीं, अतः पृथक् लिपि-चिह्नों की व्यवस्था उच्चारण-शास्त्र तक सीमित । उच्चारण की अनेक विशिष्टताएँ नियमों के रूप में ही अवधारणीय ।

शब्दोच्चारण की अनेक समस्याएं शुद्ध व्यञ्जनों के कारण ।

पूर्वाक्षर पर अवलम्बित दो-एक जैसे शुद्ध व्यञ्जनों के कारण, उच्चारण की समस्याएँ विषम से विषमतर ।[1]

नुगामी 'यण्' भी शुद्ध व्यञ्जनों के वाहक, फिर केवल "पूर्वाक्षर र अवलम्बित" ही क्यों ?

ननुगामी 'यण्' पर, दो-एक जैसे शुद्ध व्यञ्जनों का उच्चारण अवलम्बित न होने से, उनके सम्बन्ध में नियम भी अनावश्यक ।

सम्बन्ध-निर्देश

१ से ४, ५-६, ७ से १२, १३ से १६, १७ से २१, २२ से २४, २५ से २९, ३० से ३२, ३३ से ३५, ३६ से ४३, ४४ से ४८, ४९-५०, ५१ से ५५ ।

उच्चारण-खण्ड पर
शुद्ध व्यञ्जनों का प्रभाव

१. च्युत = च्युत'
   व्योम = व्योम' ।

२. ग्राम = ग्राम'
   ह्रास = ह्रास' ।

३. श्लेष = श्लेष'
   क्लेश = क्लेश' ।

४. द्वेष = द्वेष'
   द्वारा = द्वारा' ।

५. व्यापक = व्या'पक
   द्योतक = द्यो'तक ।

६. व्यापिका = व्यापि'का
   द्योतिका = द्योति'का ।[1]

७. यण् संयुक्त, आद्य शुद्ध व्यञ्जनों का उच्चारण-खण्ड पर कोई प्रभाव नहीं ।

८. अन्त = अन्'त
   रक्त = रक्'त
   कर्म = कर्'म
   धर्म = धर्'म ।

[1] सूत्र ५, ६ में तीन अक्षरीय शब्दों के नियम पूर्ववत

९. तर्क्य = तर्'क्य
मर्त्य = मर्'त्य
मत्स्य = मत्'स्य
पार्श्व = पार्'श्व ।

१०. अन्य = अन्'न्य
विप्र = विप्'प्र
कण्व = कण्'ण्व
शुक्ल = शुक्'क्ल ।[१]

११. मध्यवर्ती शुद्ध व्यञ्जन या व्यञ्जनों से दो अक्षर के शब्दों में, दो उच्चारण-खण्ड ।

१२. सुन्दर = सुन्'दर
पुस्तक = पुस्'तक
निर्गुण = निर्'गुण
निर्माण = निर्'माण ।

१३. सुन्दरी = सुन्'दरी
पुस्तिका = पुस्'तिका
निर्गुणी = निर्'गुणी
निर्माता = निर्'माता ।

---

१. सूत्र ८ में एक शुद्ध व्यञ्जन की स्थिति, सूत्र ९ में दो शुद्ध व्यञ्जनों की स्थिति और सूत्र १० में द्वित्व से प्राप्त दो शुद्ध व्यञ्जनों की स्थिति दिखायी गयी है ।

विशेष—इसी प्रकार अन्य स्थितियाँ भी सम्भव; किन्तु फलित, सूत्र ११ जैसा ही

१४.	संस्कार	=	संस्'कार
	संस्कृति	=	संस्'कृति
	संस्तुति	=	संस्'तुति
	संस्थान	=	संस्'थान।
१५.	अन्याय	=	अन्'न्याय
	अन्वय	=	अन्'न्वय
	विक्रम	=	विक्'क्रम
	विक्रेता	=	विक्'क्रेता।[१]
१६.	एकान्त	=	ए'कान्'त
	वेदान्त	=	वे'दान्'त
	समस्त	=	स'मस्'त
	विकल्प	=	वि'कल्'प।
१७.	कवीन्द्र	=	क'वीन्'द्र
	रवीन्द्र	=	र'वीन्'द्र
	सुरेन्द्र	=	सु'रेन्'द्र
	वीरेन्द्र	=	वी'रेन्'द्र।
१८.	सन्दर्भ	=	सन्'दर्'भ
	संकल्प	=	सं'कल्'प
	सन्मार्ग	=	सन्'मार्'ग
	सत्कर्म	=	सत्'कर्'म।
१९.	अत्यन्त	=	अत्'त्यन्'त
	अत्यल्प	=	अत्'त्यल्'प
	सत्कार्य	=	सत्'कार्'र्य
	अन्यान्य	=	अन्'न्यान्'न्य।

---

१. १२ से १५ तक के सूत्रों में दो उच्चारण-खण्ड और १६ से १९ तक क सूत्रों में तीन -खण्ड

२०. प्रथम दो अक्षरों के मध्य स्थित, शुद्ध व्यञ्जन या व्यञ्जनों से, तीन अक्षर के शब्दों में दो और शेष दशाओं में तीन उच्चारण-खण्ड ।

२१. पूर्व व्यञ्जन व्यवधान न होने की दशा में भी, अनुगामी शुद्ध व्यञ्जनों का वाहक होने से, द्वितीयाक्षर अपने प्रथमाक्षर से मिलने में असमर्थ।[१]

२२. प्रथम दो अक्षरों के मध्य आए शुद्ध व्यञ्जन, दूसरे और तीसरे अक्षरों के उच्चारणीय मिलन को रोकने में असमर्थ ।[२]

२३. स्थान = अस्'थान (इस्'थान)[३]
स्थूल = अस्'थूल (इस'थूल)
स्थिर = इस्'थिर
स्मित = इस्'मित

२४. स्मरण = अस्'म'रण (इस्'म'रण)
स्मारक = अस्'मा'रक (इस्'मा'रक)
स्थापित = अस्'था'पित (इस्'था'पित)
स्थापना = अस्'थाप'ना । (इस्'थाप'ना)

२५. स्वरागम दशा में, एक उच्चारण-खण्ड योग्य शब्दों में दो और दो उच्चारण-खण्ड योग्य शब्दों में तीन उच्चारण-खण्ड ।

२६. क्त्वा = अक्'त्वा (इक्'त्वा) ।

२७. स्वरागम से एकाक्षरी शब्द 'क्त्वा' में भी दो उच्चारण-खण्ड ।

---

१. १६ और १७ । २. १२ से १५ । ३. इस पुस्तक में प्रतिपादित मानक की दृष्टि से

२८. स्वरागम से अक्षर वृद्धि, अतः खण्ड—वृद्धि, अनियमित नहीं।

२९. सम्मेलन = सम्'मे'लन
सम्भावना = सम्'भाव'ना
अभ्यागत = अब्'भ्या'गत
विद्यालय = विद्'द्या'लय।

३०. विसर्जन = वि'सर'जन
नियन्त्रण = नि'यन्'त्रण
हस्तक्षेप = हस्'तक्'षेप।[१]

३१. अन्तरिक्ष = अन्'त'रिक्'ष
अपर्याप्त = अ'पर्'याप्'त
आत्मोत्सर्ग = आत्'मोत्'सर्'ग।

३२. मध्यवर्ती शुद्ध व्यञ्जनों की, विभिन्न स्थितियों के अनुसार, चार अक्षर के शब्दों में, दो के स्थान पर तीन या चार उच्चारण-खण्ड।[२]

३३. वार्षिक लेखा = वार्'षिक्'लेखा
वार्षिकोत्सव = वार्'षि'कोत्'सव
शब्दोच्चारण = शब्'दोच्'चा'रण
शीघ्रातिशीघ्र = शीग्'घ्राति'शीग्'घ्र।

३४. बड़े शब्दों के उच्चारण-खण्डों की संख्या, मध्यवर्ती शुद्ध व्यञ्जनों की संख्या और स्थिति पर निर्भर।

३५. व्यापी = व्यापी'
व्यापक = व्या'पक

---

१ क्ष=क+ष। २ २९ से ३१।

व्यापिका = व्या'पि'का
व्याप्त = व्याप्'त ।

३६. कलेवर वृद्धि से, पार्थक्य और पुनर्मिलन, विभिन्न नियमों के अन्तर्गत ।

सम्बन्ध-निर्देश

१ से ७, ८ से ११, १२ से १५, १६ से १९, २० से २२, २३ से २८, २९ से ३२, ३३-३४, ३५-३६ ।

: ६ :

ध्वनि-विलीनता

१. मय = मय

माया = माया

किन्तु

मयी = मई

मायिक = मा'इक

माये = माए

क्यों ?

२. भाव = भा व

भावी = भा वी

किन्तु

भावुक = भा'उक

भावुकता = भा'उक'ता

भावोदय = भाओ'दय

क्यों ?

३. जैसे छोटा प्रकाश, बड़े प्रकाश में विलीन; उसी प्रकार निर्बल ध्वनि, अपनी सबल ध्वनि में विलीन।

४. यकार की उत्तरोत्तर सबल ध्वनियाँ—'इ-ई-ए'।

५ वकार की उत्तरोत्तर सबल ध्वनियाँ—'उ-ऊ-ओ'।

६. य्+ई = यि = इ

य+ई = यी ई

	य्+ए	=	ये	=	ए।		
७.	व्+उ	=	वु	=	उ		
	व्+ऊ	=	वू	=	ऊ		
	व्+ओ	=	वो	=	ओ।		

८. यकार-वकार अपनी सबल ध्वनियों में विलीन।

९.	नियम	=	नि'अम[1]				
	नियामक	=	निआ'मक।				
१०.	पठनीय	=	पठ'नीअ				
	कमनीय	=	कम'नीअ				
११.	देय	=	देअ				
	गेय	=	गेअ।				
१२.	युवा	=	युआ				
	युवक	=	यु'अक				
१३.	इ+य	=	इ+य्+अ	=	इअ		
	ई+य	=	ई+य्+अ	=	ईअ		
	ए+य	=	ए+य्+अ	=	एअ।		
१४.	उ+व	=	उ+व्+अ	=	उअ		
	ऊ+व	=	ऊ+व्+अ	=	ऊअ		
	ओ+व	=	ओ+व्+अ	=	ओअ।		

१५. विलीनता पूर्व-योग में भी।

१६. मयी—मई

भावुक—भाउक

आदि में कौन शुद्ध और क्यों?

१७. विलीनता के सिद्धान्त से, मूल शब्दों की रक्षा।

1 प्रवाहमय उ में अवश्य नियम' = नि'अम

१८. जैसे बड़े प्रकाश में, छोटे प्रकाश का अस्तित्व विद्यमान, वैसे सबल ध्वनि में निर्बल ध्वनि का भी।

१९. यकार-वकार, अर्थ द्योतक अंश होने से भी अत्याज्य।

२०. अतः शुद्धता की दृष्टि से, 'भयी' और 'भावुक' आदि ही शुद्ध, न कि 'भई' और 'भाउक'।

२१. आया = आया
गया = गया
किन्तु
आयी = आई
गयी = गई
आये = आए
गये = गए।

२२. आवा = आवा
लावा = लावा
किन्तु
आवो = आओ
लावो = लाओ।

२३. लिया = लिआ
दिया = दिआ
दीया = दीआ
बीया = बीआ।

२४. छुवा = छुआ
जूवा = जूआ

सोवा　=　सोआ
खोवा　=　खोआ ।

२५. हिन्दी के तद्भव शब्दों में भी ध्वनि-विलीनता के नियम क्रियाशील ।

२६. 'आया' आदि के समान, 'आयी' आदि ही शुद्ध क्योंकि 'यकार-वकार' शब्द के अर्थद्योतक अंश ।

२७. 'आया' का स्त्री लिङ्ग 'आयी', न कि 'आई'; 'आया' का बहुवचन 'आये', न कि 'आए'; 'आना' का आज्ञात्मकरूप 'आवो' न कि 'आओ'; इस दृष्टि से यकार-वकार अर्थद्योतक अंश और उनका रहना आवश्यक ।

२८. जिस प्रकार नूतनतासूचक विशेषण—
नया　=　नया

उसी प्रकार

नयी　=　नयी, न कि 'नई',
नये　=　नये, न कि 'नए' ।

२९. 'नाई और नायी', 'नाऊ और नावू', 'झाऊ और झावू', आदि संज्ञा शब्दों में, प्रथम रूप ही ठीक'; क्योंकि यहाँ यकार-वकार अर्थद्योतक अंश नहीं ।

३०. यदि　=　जदि
वन　=　बन

कब और क्यों ?[१]

---

१. प्रस्तुत प्रकरण में यकार-वकार की विवेचना; अतः ये समस्याएँ भी, यहाँ विचारणीय ।

३१.	आय	=	आय
	आयु	=	आयु
	वायु	=	वायु ।
३२.	सत्य	=	सत्'त्य
	पूज्य	=	पूज्'ज्य
	तुल्य	=	तुल्'ल्य ।
३३.	आयत	=	आ'यत
	आयुध	=	आ'युध
	आयुस्	=	आ'युस् ।
३४.	यव	प्रायः	जव
	युग	प्रायः	जुग
	योग	प्रायः	जोग ।
३५.	यदि	प्रायः	जदि
	यथा	प्रायः	जथा
	यमुना	प्रायः	जमु'ना ।
३६.	संयोग	प्रायः	सन्'जोग ।
	सयम	प्रायः	सन्'जम
	संयुक्त	प्रायः	सन्'युक्त ।
३७.	नव	=	नव
	भव	=	भव
	भाव	=	भाव ।
३८.	जीवन	=	जी'वन
	अवकाश	=	अव'काश
	सावधान	=	साव'धान ।

३९. वधू प्रायः वधू
वन प्रायः बन
वंश प्रायः बंश।

४०. संवाद प्रायः सं'बाद
संवेग प्रायः स'बेग
संविधान प्रायः सं'बि'धान।

४१. आद्य 'य' प्रायः 'ज'।[1]

४२. आद्य 'व' प्रायः 'ब'।[2]

४३. अनुस्वार के पूर्व रहने पर भी 'य – व' विकृत।[3]

४४. आद्य यकार-वकार अत्यन्त अल्पकालिक, अतः विलम्बित उच्चारण में, वे क्रमशः अपने तालव्य जकार एवं अपने ओष्ठय 'बकार' में परिवर्तित।

४५. यकार—वकार, घोष अल्प प्राण,
जकार—बकार भी घोष अल्पप्राण;
यकार—जकार, तालव्य,
वकार—बकार, ओष्ठय,
अतः यह परिवर्तन अनियमित नहीं।

४६. 'य्-व्' अर्द्ध स्वर होने से, शीघ्रता की अपेक्षा-वाले, अतः द्रुतोच्चारण में ही इनकी शुद्धता निहित।

सम्बन्ध-निर्देश

१ से ८, ९ से १५, १६ से २०, २१ से २५, २६ से २९, ३०, ३१ से ३६, ३७ से ४०, ४१ से ४३, ४४ से ४६।

१. ३४-३५
२. ३९
३. ३६-४०

: १० :

अनुस्वार एवं अनुनासिक व्यञ्जन

१. नासिक्य एवं अनुनासिक ध्वनियाँ—

(क) (ं) —अनुस्वार

(ख) ङ्—ञ्—ण्—न्—म् } अनुनासिक व्यञ्जन
(ग) यँ्—लँ्—वँ्[1]

(घ) अँ—आँ—इँ—आदि—अनुनासिक स्वर।

२. अनुस्वार नासिक्य, शेष अनुनासिक।

३. मुखसहित नासिका से बोला जानेवाला वर्ण अनुनासिक।[2]

अथवा

जिन ध्वनियों के उच्चारण में, 'मुख-नासिका' दोनों का योग, वे 'अनुनासिक'।

४. य्—यँ्
ल्—लँ्
व्—वँ्

---

१. 'र्' का अनुनासिक नहीं।

२. मुखनासिकावचनोऽनुनासिकः ।१।१।८।

विशेष—सामान्यरूप से प्रत्येक वर्ण का उच्चारण मुख से, फिर सूत्र में उसका प्रयोग क्यों ?
'मुख' शब्द के न रहने पर नासिक्य अनुस्वार भी उक्त संज्ञा के योग्य जो उचित नहीं

५. अ — अँ
आ — आँ
इ — इँ

आदि ।

६. नासिका के आधार पर अन्तःस्थ व्यञ्जनों एवं स्वरों के दो भेद—अनुनासिक और निरनुनासिक।[1]
७. निरनुनासिक का दूसरा नाम 'अननुनासिक'।[2]
८. वर्गों के पञ्चम वर्ण नित्य अनुनासिक, अन्तःस्थ एवं स्वरों का 'अनुनासिक होना' सामयिक।
९. सामयिक अनुनासिकता चन्द्रविन्दु से प्रकट।
१०. (i) ङ्-ञ्-ण्-न्-म्-स्पर्श अनुनासिक व्यञ्जन,
(ii) यँ-लँ-वँ-अन्तःस्थ अनुनासिक व्यञ्जन।
११. अं = अ + ं
आं = आ + ं
इं = इ + ं

आदि ।

१२. अनुस्वार, स्वर के पश्चात् आने वाली नासिक्य-ध्वनि।
१३. 'अनुस्वार' का 'पालि नाम' 'बिन्दुसरानुग'[3] अर्थात् वह विन्दु जो स्वर के पश्चात् आवे।

---

१. निरनुनासिक = निर् + अनुनासिक
२. अननुनासिक = अन् + अनुनासिक
विशेष—इन दोनों का अर्थ, 'जिनके उच्चारण में नासिका का योग न हो' वे वर्ण।
३. बिन्दुसरानुग = बिन्दु स्वरानुग
'बिन्दु+सर+अनग बिन्दु+स्वर+अनुग

१५. शास्त्रीय दृष्टि से, कुछ विशिष्ट दशाओं में, पदान्त 'म्' या अपदान्त 'म्—न्' के स्थान पर आनेवाली, अनेक दशाओं में परिवर्तित होकर अनुनासिक व्यञ्जनों का रूप धारण करने वाली, अन्तःस्थ या ऊष्म व्यञ्जनों के पूर्व प्रायः विद्यमान रहनेवाली, शुद्ध नासिक्य ध्वनि, 'अनुस्वार'।

१६. शुद्ध नासिक्य ध्वनि के रूप में अनुस्वार का लोप, और उच्चारण दृष्टि से अब वह केवल स्पर्श अनुनासिक व्यञ्जनों का प्रतीक।

१७. अनुस्वार की वास्तविक सत्ता, अन्तःस्थ एवं ऊष्म व्यञ्जनों के पूर्व, किन्तु हिन्दी में उसके सर्वत्र दर्शन, अतः वह सर्वत्र विचारणीय।

१८. अंक = अङ्क = अङ्'क
अंग = अङ्ग = अङ्'ग
= ङ।

१९. अंचल = अञ्चल = अन्चल = अन्'चल
कांचन = काञ्चन = कान्चन = कान्'चन
= ञ् = न्।

२०. कंठ = कण्ठ = कन्ठ = कन्'ठ
कांड = काण्ड = कान्ड = कान्'ड
= ण् = न्।

२१. अंत = अन्त = अन्'त
पंथ = पन्थ = पन्'थ
ं = न् ।

२२. अंबु = अम्बु = अम्'बु
शंभु = शम्भु = शम्'भु
ं = म् ।

२३. वर्गीय व्यञ्जनों के पूर्व, अनुस्वार, मात्र शुद्ध स्पर्श अनुनासिक व्यञ्जन ।

२४. कवर्ग के पूर्व अनुस्वार = ङ्
तवर्ग के पूर्व अनुस्वार = न्
पवर्ग के पूर्व अनुस्वार = म् ।

२५. चवर्ग के पूर्व 'ञ्' का उच्चारण 'न्'
टवर्ग के पूर्व 'ण' का उच्चारण 'न्'
होने से, इन वर्गों के पूर्व भी अनुस्वार = न् ।

२६. संयम = सन्'जम
संयोग = सन्'जोग

२७. यकार के पूर्व अनुस्वार का उच्चारण 'न्' किन्तु ऐसी दशा में यकार के स्थान पर जकार अर्थात् चवर्ग की स्थिति ।

२८. संयम = सञ्'यम
संयोग = सञ्'योग

२९. यकार के तालव्य होने से, उसके पूर्व आये अनुस्वार का उच्चारण 'ञ्' भी उचित ।

३०. 'संयम' आदि के 'सञ्'यम' आदि उच्चारण में यकार तो सुरक्षित ही, चवर्ग के पूर्व लुप्त ञकार भी प्रकट ।

३१. संयम = सय्ँ'यम या संयम
संयोग = सय्ँ'योग या संयोग ।

३२. यकार के पूर्व, अनुस्वार का विकल्प[1] से य्ँ किन्तु वह केवल एक स्थानापन्न ध्वनि, न कि स्वयं उसका उच्चारण ।

३३. संरक्षक = सन्'रक्'षक
सरक्षण = सन्'रक्'षण

३४. सलाप = सन्'लाप
सलग्न = सन्'लग्'न ।

३५. रकार एव लकार के पूर्व अनुस्वार का[2] न् ।

३६. सलाप = सल्ँ'लाप या सं'लाप
संलग्न = सल्ँ'लग्'न या सं'लग्'न
(पूर्ववत्)[3]

३७. संवाद = सम्'वाद
संवेग = सम्'वेग

३८. वकार के पूर्व अनुस्वार = म् ।

३९. संवाद = सव्ँ'वाद या सम्'वाद
संवेग = सव्ँ'वेग या सम्'वेग ।
(पूर्ववत्)[4]

४०. संशय = सन्'शय
संशोधन = सन्'शो'धन

---

१. अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः ।८।४।५८ ।
वा पदान्तस्य ।८।४।५९ ॥

२. अनुस्वार का = अनुस्वार का उच्चारण ।

३-४. अर्थात यहाँ भी लँ- वँ- अनुस्वार की स्थानापन्न ध्वनियाँ ।

४१. संसद = सन्'सद
संसार = सन्'सार

४२. ऊष्म व्यञ्जनों के पूर्व अनुस्वार = न् ।

४३. सिंह = सिङ्ह
संहार = सङ्हार ।

४४. हकार के पूर्व अनुस्वार = ङ् ।[१]

४५. कण्ठ्य व्यञ्जनों के पूर्व अनुस्वार = ङ
पवर्ग एवं वकार के पूर्व अनुस्वार = म्
अन्य सभी व्यञ्जनों के पूर्व अनुस्वार प्रायः 'न्' ।

४६. प्रायः क्यों
'संयम' आदि का उच्चारण 'सञ्'यम' आदि होने से ।

४७. वाङ्मय को वांमय
सम्राट को संराट
पुण्य को पुंय
कण्व को कंव
लिखने पर
वांमय = वाम्'मय
संराट = सन्'राट
पुंय = पुञ्'य
कंव = कन्'व
जो न इष्ट, न उचित ।

४८. शुद्ध स्पर्श अनुनासिक व्यञ्जन, सर्वत्र अनुस्वार से व्यक्त होने के योग्य नहीं ।

---

१ कवर्ग एवं हकार कंठ्य

४९. अनुस्वार, एक सांधिक ध्वनि, अतः उसके सम्यक् बोध के लिए संधि-नियमों का ज्ञान आवश्यक।

५०. नर कनक देना
नीति सैनिक सेना
नूतन दिनेश भानु।

५१. मद कमल राम
माया कुमार रमा
मोह कुमुद स्वामी।

५२. शब्दों में स्वरान्त 'न-म' के भी प्रचुर प्रयो
विद्यमान।

५३. — वर्णन गुण
— प्रणाम प्राण
— परिणाम प्राणी।[1]

५४. लिखित भाषा में स्वरान्त 'ण' के भी।

५५. हृदयँ
हियँ
ध्रुवँ।[2]

५६. अवधी में स्वरान्त 'यँ-वँ' के भी।

सम्बन्ध-निर्देश

१ से १०, ११ से १७, १८ से २५, २६ से ३२, ३३ से ३६, ३७ से ३९, ४० से ४२, ४३-४४, ४५-४६, ४७ से ४९, ५० ५६।

१. शब्दों के आदि में स्वरान्त णकार का प्रयोग नहीं या नगण्य।
विशेष —'ङ्-ञ्' के स्वरान्त रूपों का प्रयोग नहीं।

२ अवधी ( )

अनुनासिक स्वर

१. अँधेरा हँसना जहँ[१]
अँधेरी सँवारना जाहँ ।[२]
(अँ)

२. आँख दाँत यहाँ
आँसू साँप वहाँ
आँधी काँटा कहाँ ।
(आँ)

३. उँगली मुँह कहउँ ।[३]
(उँ)

४. ऊँट घूँट चूँ
ऊँचा पूँछ हूँ ।
(ऊँ)

५. पिंजड़ा = पिँजड़ा = पिँज'ड़ा
सिंघाड़ा = सिँघाड़ा = सिँघा'ड़ा
नहिं = नहिँ[४]
(िं = िँ)
यहाँ इं = इँ ।

६. इंटा = ईँटा
सींचना = सीँच'ना
खींचना = खीँच'ना
यहाँ ईं = ईँ (ीं = ीँ)

---

१ १ से ४ अवधी

७. नहीं = नहीँ
कहीं = कहीँ
चलीं = चलीँ
ईं = ईँ ।

८. गेंद = गेँद
भेंट = भेँट
सेंकना = सेँक'ना
(ें = ेँ)

९. चलें = चलेँ
पढ़ें = पढ़ेँ
खेलें = खेलेँ
(ें = ेँ)
एं = एँ ।

१०. हैं = हैँ
भैंस = भैँस
ऐंठना = ऐँठना
(ैं = ैँ)
यहाँ ऐं = ऐँ ।

११. सोंठ = सोँठ
घोंसला = घोँस'ला
लड़कों = लड़'कोँ
(ों = ोँ)
यहाँ ओं = ओँ ।

१२. सौंफ = सौँफ
कौंधना = कौँध'ना
चौंकना = चौँक'ना

(ॉं = ॉँ)
यहाँ ऑं = ऑँ ।

१३. हिन्दी के तद्भव शब्दों में, अनुनासिक स्वरों का वाहुल्य ।

१४. बिन्दु अनुस्वार का भ्रामक, अतः अनुनासिक इं—ईं, एं—ऐं, ओं औं भी "इँ—ईँ, एँ—ऐँ; ओँ—औँ" के रूप में, चन्द्र बिन्दु से प्रकट करने के योग्य ।

१५. हँस = हँस[1]
किन्तु
हँस = हन्स ।[2]

१६. गाँधी = गाँधी
किन्तु
गांधी = गान्धी ।

१७. आँधी = आँधी
किन्तु
आंधी = आन्धी ।

१८. चन्द्र बिन्दु एवं अनुस्वार में उच्चारण भेद वर्तमान, अतः उनका ऐच्छिक प्रयोग नहीं ।

१९. 'हँस और हंस' अर्थ भेद से, यथावसर दोनों ठीक ।

२०. 'गाँधी और गांधी' विकल्प रूप से प्रचलित, वैसे 'गन्ध' मूल से 'गांधी' ही अधिक उपयुक्त ।

---

१. 'मत हँस' (आज्ञात्मक रूप). २. 'हंस' पक्षी विशेष ।

२१. 'आंधी' जैसा उच्चारण न होने से 'आँधी' ही शुद्ध।

२२. संस्कृत में अनुनासिक स्वरों का प्राय: अभाव, फलत: हिन्दी के तत्सम शब्दों में भी वे अप्राप्य।

२३. प्राय: क्यों ?

संस्स् कर्ता ; संस्स्कर्ता[१]
पुँस्कोकिल ; पुंस्कोकिल
चक्रिँस्त्रायस्व ; चक्रिंस्त्रायस्व

अर्थात्

अनुस्वार के विकल्प से अनुनासिक स्वरों का प्रयोग मिलने से।

२४. सँस्स्कर्ता = सँस्स्कर्ता (सँस्स्' कर्'ता)[१]

किन्तु

संस्स् कर्ता = सन्स्स्कर्ता (सन्स्स्'-कर्'ता)

२५. पुँस्कोकिल = पुँस्कोकिल (पुँस्' को' किल)

किन्तु

पुंस्कोकिल = पुन्स्कोकिल (पुन्स्' को' किल)

२६. चक्रिंस्त्रायस्व = चक्रिँस्त्रायस्व (चक्' क्रिँस्' त्रा' यस्'स्व)

किन्तु

चक्रिंस्त्रायस्व = चक्रिन्स्त्रायस्व (चक्' क्रिन्स्' त्रा' यस्-स्व)

---

[१] भाष्यकार के अनुसार इन दोनों पक्षों में—
'सँस्कर्ता—संस्कर्ता' अर्थात एक सकार वाले रूप भी बनते हैं।

२७. अनुस्वार, अनुनासिक स्वरों से भिन्न, यह 'संस्कर्ता' एवं 'सँस्कर्ता' आदि उदाहरणों में भी स्पष्ट ।

२८. निरनुनासिक स्वरों के समान, अनुनासिक स्वरों के भी दो प्रमुख भेद—ह्रस्व अनुनासिक एवं दीर्घ अनुनासिक ।

२९. अँ, इँ, उँ
ह्रस्व अनुनासिक स्वर ।[१]

३०. 'आँ, ईँ, ऊँ, एँ, ऐँ, ओँ, औँ'—
दीर्घ अनुनासिक स्वर ।[२]

सम्बन्ध-निर्देश

१ से १४, १५ से २१, २२ से २७, २८ से ३० ।

१-२. यत्र तत्र 'ऋँ' और ऋँ' के रूप में
'ऋ ॠ' के भी अनुनासिक रूप प्राप्त ।

सम्पर्कित अनुनासिकता

१. न = नँ
 ना = नाँ
 नो = नोँ ।[१]

२. म = मँ
 मा = माँ
 मो = मोँ ।

३. नद = नँद
 नाद = नाँद
 नाभि = नाँभि ।

४. मद = मँद
 माप = माँप
 माता = माँता

५. राम = राँमँ[२]
 साम = साँमँ
 धाम = धाँमँ

६. दान = दाँनँ
 भान = भाँनँ
 भानु = भाँनुँ ।

---

१. न = नँ = न् + अँ, २. राम = राँमँ = र् + आँ + म् + अँ आदि।
ना = नाँ = न् + आँ,
नी = नीँ = न + ईँ आदि ।

७. सावधानी से

न = न (न् + अ)

म = अ (म् + अ)

नद = नद (न् + अ + द् + अ)

आदि भी सम्भव ।

८. सम्पर्कित अनुनासिकता बहुत कुछ वैकल्पिक ।

९. भान = भाँनुँ

या

भान् = भाँन्

या

भान् = भानुँ

या

भान = भान्

अर्थात्

दो स्वरों को सम्पर्कित दशा में अनेक विकल्प की संभावनाएँ ।

१०. अनुनासिक व्यञ्जनों के सम्पर्क में निरनुनासिक स्वरों का अनुनासिक उच्चारण ही प्रवाहपूर्ण, अतः वह सभी विकल्पों में उपयुक्त ।

११. 'नय' का उच्चारण 'नँय'

नेय का उच्चारण 'नेँय'

माया का उच्चारण 'माँया'

'नाव' का उच्चारण 'नाँव'

जैसा न होने से

नय = नय

नैंय = नेय

माया = माया

नाव = नाव

अर्थात्

यकार—वकार के पूर्व सम्पर्कित अनुनासिकता का ह्रास।

१२. नर = नर या नर

नारी = नाँरी या नारी

मूल = मूँल या मूल।

(पूर्ववत्)

१३. नाश = नाँश या नाश

मास = माँस या मास

नासा = नाँसा या नासा।

(पूर्ववत्)

१४. नेह = नेँह या नेह

स्नेह = स्नेँह या स्नेह

मोह = मोँह या मोह।

(पूर्ववत्)

१५. रकार-लकार या ऊष्म व्यञ्जनों के पूर्व, सम्पर्कित अनुनासिकता पूर्ववत् वैकल्पिक।

१६. नाम = नाँमँ

मान = माँनँ

नाना = नाँनाँ

१७. मोन = मोँनँ

मौन = मौँनँ

मौनी = मौँनीँ

१८. दो अनुनासिक व्यञ्जनों के मध्य आये स्वरों को सम्पर्कित अनुनासिकता कुछ अधिक दृढ़।

१९. सदा या प्राय:
'नाम' का उच्चारण " नाँमँ
'मीन' का उच्चारण " मीँनँ
जैसा होने से विकल्पहीनता भी।

२०. अन्त = अँन्त = अँन्'त
सन्त = सँन्त = सँन्'त
गन्ता = गँन्ता = गँन्'ता

२१. शान्त = शाँन्त = शाँन्'त
शान्ति = शाँन्ति = शान्'ति
कान्ति = काँन्ति = काँन्'ति

२२. सम्भव = सँम्भव = सँम्'भव
सम्राट = सँम्राट = सँम्'राट
साम्राज्य = साँम्राज्य = साँम्'राज्'ज्य।

२३. सम्पर्कित अनुनासिकता शुद्ध व्यञ्जनों के पूर्व भी।

२४. अन्य = अँन्'न्यँ
शून्य = शूँन्'न्यँ
दैन्य = दैँन्'न्यँ।

२५. साम्य = साँम्'म्यँ
काम्य = काँम्'म्यँ
सौम्य = सौँम्'म्यँ।

२६ अनुनासिक व्यञ्जनों के द्वित्व से अनुगामी यण्

भी, सम्पर्कित अनुनासिकता से प्रभावित ।[1]

२७. संस्कृत = सन्स्कृत = सँन्स'कृत
संस्कार = सन्स्कार = सँन्स्'कार
सांस्कृतिक = सान्स्कृतिक = साँन्स्'कृ'तिक

२८. सम्पर्कित अनुनासिकता अनुस्वार से भी उत्पन्न ।

२९. हंस = हंस
किन्तु
हंस = हन्स = हँन्स ।

३०. गाँधी = गाँधी
किन्तु
गांधी = गान्धी = गाँन्धी

३१. अनुस्वार, अनुनासिक स्वरों से पृथक् और बृहत्, यह सम्पर्कित अनुनासिकता से भलीभाँति स्पष्ट ।

३२. इन = इँनँ
किन = किँनँ
उन = उँनँ ।

३३. नाक = नाँक
कान = काँनँ
आम = आँमँ ।

३४. तुम = तुँमँ

---

१. अन्याय = अँन्'न्याय, अन्वय = अँन्'न्वय आदि इस नियम के अपवाद ।

विशेष—यह नियम मुख्य रूप से अनुगामी 'य' पर लागू ।

मेरा = मेँरा
मोटा = मोँटा ।

३५. सम्पर्कित अनुनासिकता तद्भव शब्दों में भी विद्यमान ।

३६. गाँव = गाँवँ
नाँवँ = नाँवँ
ठाँव = ठाँवँ

३७. हृदयँ = हृँदयँ
हियँ = हिँयँ
भ्रुवँ = भ्रुँवँ ।

३८. संयोग = सय्ँयोग = सँय्ँयोग
संवाद = सव्ँवाद = सँव्ँवाद
संवेग = सव्ँवेग = सँव्ँवेग ।

३९. स्वर एवं अन्तःस्थ यकार या वकार के सम्पर्क में, एक के अनुनासिक होने पर दूसरे का अनुनासिक होना अनिवार्य ।[१]

४०. हैं (हैँ) = हयँ = हँयँ
मैं (मैँ) = मयँ = मँयँ ।

४१. 'में, मैं, हमें' आदि कुछ अपवादों को छोड़कर अनुनासिक व्यञ्जनों के साथ अनुनासिक स्वरों का प्रयोग नहीं ।

४२. संस्कृत 'मे' से अन्तर स्थापित करने के लिए ही हिन्दी 'में' (मेँ), अनुनासिक स्वर से युक्त ।

---

१. ३६ ३७ ३८ ।

हिन्दी 'मैं' (मैँ) भी कदाचित् संस्कृत 'मय' से भिन्नता के लिए अनुनासिक स्वर से युक्त ।

४४. उच्चारण दृष्टि से
में = ने
(मेँ = नेँ)
फिर 'ने' में अनुनासिक स्वर की व्यवस्था क्यों नहीं ?[१]
'मे' के समान भ्रामक न होने से ।[२]

४५. हमे = हमेँ या हमे[३]
किन्तु
हमें (हमेँ) = हमेँ
अर्थात्
अनुनासिक स्वर व्यवस्था से सदैव एक जैसा उच्चारण ।

४६. हिन्दी में कदाचित्, सम्पर्कित अनुनासिकता की अस्थिरता को दूर करने के लिए ही 'हमें (हमेँ)' आदि में अनुनासिक व्यञ्जनों के साथ अनुनासिक स्वरों की व्यवस्था ।

४७. कुछ विचारकों के मत से सम्पर्कित अनुनासिकता अल्प ।

४८. सम्पर्कित अनुनासिकता, मुख्य रूप से, नित्य अनुनासिक व्यञ्जनों के सम्पर्क में, निरनुनासिक स्वरों में उत्पन्न ।

सम्बन्ध-निर्देश

१ से ६, ७ से १०, ११, १२ से १५, १६ से १९, २० से २३, २४ से २६, २७, २८, २९ से ३१, ३२ से ३५, ३६ से ३९, ४० से ४६, ४७-४८ ।

●

---

१. 'मै = मय' की सम्भावना, अतः उससे बचने के लिए मैं (मैँ) की व्यवस्था ।

२. 'मे' संस्कृत 'मे' (मेरा) का भ्रामक अतः उसमें अनुनासिक स्वर की व्यवस्था ।

३ सचेष्ट दशा में 'हमे' का 'ए' निरनुनासिक ।

हिन्दी की कुछ विकसित ध्वनियाँ

१. ड़—ढ़, न्ह—म्ह; ल्ह।

२. ड़्+अ=ड़
   ढ़्+अ=ढ़।[1]

३. डर = डर
   डाल = डाल
   डोरा = डोरा।

४. कड़ा = क्+अ+ड्+आ = क्+अ+ड़्+आ।
   बड़ा = ब्+अ+ड्+आ = ब्+अ+ड़्+आ।
   गाड़ी = ग्+आ+ड्+ई = ग्+आ+ड़्+ई।

५. ढाल = ढाल
   ढेर = ढेर
   ढेरा = ढेरा।

६. काढ़ा = क्+आ+ढ्+आ = क्+आ+ढ़्+आ।
   गाढ़ा = ग्+आ+ढ्+आ = ग्+आ+ढ़्+आ।
   पीढ़ा = प्+ई+ढ्+आ = प्+ई+ढ्+आ।

७. दो स्वरों के बीच का ड्=ड़;
   ढ् = ढ़्।

८. 'ड और ढ' के नीचे बिन्दु रख कर 'ड़ और ढ़' सूचित।

---

१. स्वरान्त रूप।

९. कड़ा — वड़ा
काढ़ा — गाढ़ा
आदि उच्चारण शैथिल्य को दूर करने के लिए ही
'ड़—ढ़' ध्वनियों की सृष्टि ।

१०. दो स्वरों के बीच क्यों ?
गड्डी = ग्+अ+ड्+ड्+ई
गड्ढा = ग्+अ+ड्+ढ्+आ
↓
स्वर और व्यञ्जन के मध्य
↓
व्यञ्जन और स्वर के मध्य[१]
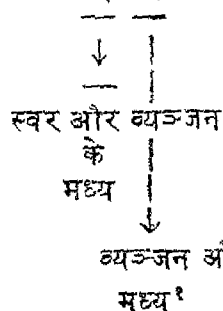
११. न् + ह् = न्ह्
न्ह् + अ = न्ह ।

१२ म् + ह् = म्ह्
म्ह् + अ = म्ह ।

१३. न्ह—म्ह
अनुनासिक महाप्राण ध्वनियाँ ।

१४. न्ह—
उन्हें = उ + न्हें = उन्हें'
जिन्हें = जि + न्हें = जिन्हें'
किन्हें = कि + न्हें = किन्हें' ।[२]

---

१. यहाँ दो स्वरों के मध्य की स्थिति न होने से ड्, ढ् अविकृत ।

२. यहाँ 'उन्हें = उन्हें', जिन्हे = जिन्हे' आदि ।

१५. म्ह—
तुम्हें = तु + म्हें = तुम्हें
तुम्हारा = तु + म्हा + रा = तुम्हा'रा
तुम्हारी = तु + म्हा + री = तुम्हा'री।

१६. हकार के संयोग से,
'न्ह् – म्ह् के रूप में,
दो अनुनासिक महाप्राण
व्यञ्जनों की सृष्टि।

१७. उच्चारण-दुरूहता को दूर करने के लिए
चिह्न से चिन्ह
मध्याह्न से मध्यान्ह;
ब्रह्म से ब्रम्ह
ब्रह्मी से ब्राम्ही
आदि तद्भव शब्दों की सृष्टि।

१८. 'ह् + न'; 'ह् + म' के
स्थान-विपर्यय से
'न् + ह'; 'म् + ह' आदि के रूप में ही
अनुनासिक महाप्राण ध्वनियों का विकास।

१९. चिह्न = चिह्'न
मध्याह्न = मद्'ध्याह्'न
ब्रह्म = ब्रह्'म
ब्राह्मी = ब्राह्मी।

२०. तद्भव दशा में—
चिन्ह = चिन्'न्ह
मध्यान्ह = मद्'ध्यान्'न्ह

अम्ह = अम्'म्ह

ब्राम्ही = ब्राम्'म्ही।

२१. स्थान-परिवर्तन से, हकार से
संयुक्त नकार या मकार का
द्वित्व और उस द्वित्व के संविभाग से
'न्ह—म्ह' का जन्म।[1]

२२. ल् + ह् = ल्ह्
ल्ह् + अ = ल्ह।

२३. आल्हा = आ + ल्हा = आल्हा'
चूल्हा = चू + ल्हा = चूल्हा'
दूल्हा = दू + ल्हा = दूल्हा'।

२४. हिन्दी में हकार के संयोग से,
अन्तःस्थ महाप्राण 'ल्ह्' की सृष्टि।

२५. दुल्हा = दुल्'हा
दुल्हिन = दुल्'हिन

२६. हिन्दी के 'दुल्हा' आदि शब्दों में लकार, हकार से पृथक्,
ऐसी दशा में वह अल्प प्राण ही।

२७. मध्यवर्ती शुद्ध 'न्-म्-ल्', जब पूर्ववर्ती अक्षर से पृथक्
होकर अनुगामी हकार के साथ, तभी उनके महाप्राण
रूपों की सृष्टि।

२८. हिन्दी की कुछ बोलियों में 'य्हाँ, व्हाँ' के रूप में
यकार-वकार महाप्राण भी विद्यमान।

सम्बन्ध-निर्देश

१-२; ३ से १०, ११ से १६, १७ से २१, २२ से २७, २८।

---

1. हिन्दी के 'उन्हें' आदि बिल्कुल अपने शब्दों में 'द्वित्व' नहीं।

'ए-ओ' स्वरों के ह्रस्व-रूप

१. खेत — खेतवा
पेड़ — पेड़वा
लोटा— लोटवा
घोड़ा— घोड़वा।

२. खेत = खेत
पेड़ = पेड़
किन्तु
'खेतवा' का उच्चारण 'खेत-वा'
पेड़वा का उच्चारण 'पेड़-वा'
नहीं।

३. 'खेतवा' का उच्चारण 'खेत-वा' से
'पेड़वा' का उच्चारण 'पेड़-वा' से
भिन्न एवं लघु होने के कारण यहाँ का 'ए' ह्रस्व।

४. लोटा = लोटा
घोड़ा = घोड़ा
किन्तु
'लोटवा' का उच्चारण 'लोट-वा'
'घोड़वा' का उच्चारण 'घोड़-वा'
नहीं।

५. 'लोटवा' का उच्चारण 'लोट-वा' से
'घोड़वा' का उच्चारण 'घोड़-वा' से

भिन्न एवं लघु होने के कारण यहाँ का 'ओ' ह्रस्व।

६. लिपि-चिह्नों के अभाव में 'ए-ओ' के ह्रस्व-रूप क्रमशः एँ-ओँ रूपों में व्यक्त।

७. प्रतीक रूप में अर्द्ध चन्द्र ह्रस्वत्व के योग्य।

८. लेखन-आधिक्य, अर्द्धत्व की भावना से आच्छादित, या तिरस्कृत।

९. अनुनासिक ध्वनियों के क्षेत्र में, अर्द्ध चन्द्र लघुत्व का द्योतक, पूर्व से ही।[1]

१०. 'ए-ओ' पर अर्द्ध चन्द्र लगाने से ह्रस्वत्व के विकास की विलोम दशा भी सूचित।

११. विकास की सामान्य दशा ह्रस्व से दीर्घ की ओर, विलोम दशा दीर्घ से ह्रस्व की ओर।

१२. एँ ←ए
ओँ ←ओ
ह्रस्व दीर्घ।[2]

१३. एहि = एँहि
जेहि = जेँहि
तेहि = तेँहि

---

१. पञ्चमवर्ण का द्योतक अनुस्वार (ं), अनुनासिक स्वरों (ँ) से प्रबल एवं बृहत्।

२. ँ← अर्थात् अनुस्वार से अनुनासिक स्वरों का विकास भी विलोम दशा में।

केहि = के॑ हि ।[1]

१४. कहेहु = क हे॑ हु
चलेउ = च ले॑ उ
रहेउ = र हे॑ उ
देखिहउँ = दे॑ खि हउँ ।[2]

१५. कोउ = को॑ उ
सोइ = सो॑ इ
दोहाई = दो॑ हाई
गोसाईं = गो॑ साईं ।[3]

१६. अवधी में ह्रस्व 'ऍ-ऑ' के, पर्याप्त प्रयोग विद्यमान ।

---

१. "एहि बिधि करत सप्रेम बिचार ।" (सु० का०)
"जो जेहि भाँय रहा अभिलाषी ।" (अयो० का०)
"तेहि अवसर केवट धीरज धरि ।" (अयो० का०)
"सखा धर्म निबहइ केहि भाँती ।" (सु० का०)

२. "देन कहेहु बरदान दुइ तेउ पावत संदेहु ।" (अयो०)
"चलेउ हरषि रघुनायक पासा ।" (सुन्दर०)
"रहेउ ठटुकि एक टक पल रोकी ।" (सुन्दर०)
"देखिहउँ जाइ चरन जल जाता ।" (सुन्दर०)

३. "जाना कोउ रिपु दूत बिसेषा ।" (सुन्दर०)
"जौं पै दुष्ट हृदय सोइ होई ।" (सुन्दर०)
"उत रावन इत राम दोहाई ।" (लंका०)
"महि सोवत तेइ राम गोसाईं ।" (अयो०)

से

१७. "राखिअ बाँधि मोहि अस भावा ।"[1]
"मोहि कपट छल छिद्र न भावा ।"[2]
यहाँ मोहि = मोहि ।

१८. "सन मुख होइ जीव मोहि जब हीं ।"[3]
"निर्मल मन जन सो मोहि पावा ।"[4]
यहाँ मोहि = मोँहि ।

१९. 'मोहि' एवं 'मोँहि' के
दीर्घ एवं ह्रस्व उच्चारण में
अर्थ-भेद विद्यमान ।

२०. 'मोहि' से कर्त्ता कारक
तथा 'मोँहि' से सम्बन्ध एवं कर्म कारक का
बोध ।[5]

२१. सोरह = सोरह (संख्याबोधक विशेषण)
सोरहीं = सोँरहीं (क्रमबोधक विशेषण)
यहाँ अर्थ भेद 'ईं' प्रत्यय पर निर्भर,
फिर 'सो' एवं 'सोँ' की भिन्नता क्यों ?

---

१. मुझे तो यही अच्छा लगता है कि इसे बाँध कर रखा जाये ।"
(सुग्रीव, राम से, विभीषण के प्रति)

२. मुझे कपट और छल छिद्र नहीं सुहाते ।'

३. 'जीव ज्यों ही मेरे सम्मुख होता है, (त्यों ही उसके करोड़ों जन्म के पाप नष्ट हो जाते हैं, "जन्म कोटि अघ नासहिं तबहीं") ।'

४. 'जो निर्मल मन होता है, वही मुझ को पाता है ।'
(२ से ४, श्रीरामजी, सुग्रीव से)

विशेष—(१) १ से ४, सभी रामचरितमानस, सुन्दरकाण्ड से ।

५. (१) 'भावा तथा 'न भावा' क्रिया की दृष्टि से 'मोहि' कर्त्ता कारक के योग्य (भावे प्रयोग);
(२) 'सनमुख होइ' क्रिया की दृष्टि से 'मोँहि' सम्बन्ध कारक, तथा पावा क्रिया की दृष्टि से कर्म कारक के योग्य

२२. सोरह = सो'रह
सोरहीं = सो॑'र'हीं
'सो' एवं 'सो॑' की भिन्नता
उच्चारण-खण्डों के परिवर्तन से।

२३. खण्ड-परिवर्तन, 'सोर'हीं' के
रूप से भी किन्तु वह प्रवाहहीन,
अतः 'सो॑'र'ही' ही इष्ट।

२४. दीर्घत्व एवं ह्रस्वत्व कहीं अर्थ पर,
कहीं उच्चारण-खण्ड तथा प्रवाह आदि पर निर्भर।

२५. खेत = खेत
खेती = खेती

किन्तु

खेतई = खे॑त'ई[1]
खेतिहर = खे॑ति'हर
खेतिया = खे॑ति'या
खेतवा = खे॑त'वा।

२६. घोड़ा = घोड़ा
घोड़ी = घोड़ी
फोड़ा = फोड़ा

किन्तु

घोड़वा = घो॑ड़'वा
घोड़ी = घो॑ड़ि'या

---

१. उस व्यक्ति का नाम, जो खेत में (माँ के काम आदि करते समय) उत्पन्न हुआ हो।

फोड़ा = फोँड़्वा
फोड़ा = फोँड़िया।[1]

२७. प्रत्यय द्वारा शब्द-विस्तार होने पर 'ए-ओ' के स्थान पर क्रमशः ह्रस्व एँ-ओँ।

२८. 'हर, वा, या' आदि प्रत्यय अपने पूर्वाक्षर को भी ह्रस्व करने वाले।

२९. प्रत्यय जुड़ने पर 'ए-ओ' का ह्रसत्व कदाचित् अनुगामी ह्रसत्व के कारण।[2]

३०. एँहि — यहि
जेँहि — ज्यहि
तेँहि — त्यहि
केँहि — क्यहि
कोँउ — क्वउ
सोँइ — स्वइ
दोँहाई — द्वहाई
सोँहाई — स्वहाई
गोँसाईं — ग्वसाईं
(आदि)

इन उच्चारणों में प्रथम को,
द्वितीय से पृथक् कर पाना सरल नहीं।

३१. प्रयोग में,
ह्रस्व एँ, य के;

---

१. छोटा फोड़ा। 'इया' लघुतावाचक प्रत्यय।

२. ए-ओ का ह्रसत्व अर्थात् 'ए-ओ' का 'एँ-ओँ' होना।

ह्रस्व ओँ, व के
समान या सन्निकट।

३२. संस्कृत-व्याकरण में, स्वरों के अनेक भेदोपभेदों का सूक्ष्म विवेचन, फिर ह्रस्व 'एँ-आँ' का विवेचन क्यों नहीं? कदाचित् 'य-व' के रूप में पर्यवसान हो जाने से ही।

सम्बन्ध-निर्देश

१ से ५, ६ से १२, १३ से १६, १७ से २०, २१ से २४, २५ से २६, ३० से ३२।

ऐ-औ

| |
१. ऐ = अय (अ य)
S
ऐ = अय् (अ य्)
| |
ऐ = अइ (अ इ)
| S
ऐ = अई (अ ई)[१]
ऐ = ऐ (मूलवत्)।
| |
२. औ = अव (अ व)
S
औ = अव् (अ व्)
| |
औ = अउ (अउ)
| S
औ = अऊ (अ ऊ)[२]
औ = औ (मूलवत्)
३. ह्रस्व ऍ—ऑ के विकास से,
| |
ऐ = अऍ (अ ऍ)
| |
औ = अऑ (अ ऑ)
भी।
४. अऍ—अऑ, कदाचित् अपने वर्ग के उच्चारणों में निर्बलतम।

---

१. २—'कुछ संस्कृत-शब्दों' के अन्त में।

५. वैदिक भाषा में—
'ऐ' का उच्चारण 'आइ',
'औ' का उच्चारण 'आउ'।[१]

६. संस्कृत में—
ऐ का उच्चारण 'अइ',
औ का उच्चारण 'अउ'।

७. हिन्दी में, संयुक्त स्वर 'ऐ-औ' की अनेक विकृतियाँ और उनका विकास मूल स्वरों के रूप में भी।

८. ऐसा = अय'सा (ऐ'सा)
ऐसी = अय'सी (ऐ'सी)
ऐसे = अय'से (ऐ'से)
(ऐ = अय)।

९. जैसा = जय'सा (जै'सा)
जैसी = जय'सी (जै'सी)
जैसे = जय'से (जै'से)
(ऐ = अय)

१०. है = हय (है')
जै = जय (जै')
कै = कय (कै')[२]
(ऐ = अय)।

११. ऐसा = अय्'सा (ऐ'सा)
जैसा = जय्'सा (जै'सा)
है = हय्' (है')
(ऐ = अय्)

१. विद्वानों द्वारा अनुमानित।

२ 'कै दिन' अवधी।

१२. बलाघात से अय का अय् ।

१३. ऐसो = अएँ'सो (ऐ'सो)[1]
जैसो = जएँ'सो (जै'सो)
कैसो = कएँ'सो (कै'सो)
(ऐ = अएँ)

१४. उत्तरोत्तर बल से 'ऐसो' के—
"अएँ'सो—अय'सो—अय्'सो—अइ'सो"
ये सभी उच्चारण सम्भव ।

१५. गैया = गइ'या (गै'या)
मैया = मइ'या (मै'या)
भैया = भइ'या (भै'या)
(ऐ = अइ) ।

१६. 'गैया' आदि के 'गएँ'या', 'गय'या', 'गय्'या' आदि उच्चारण भी सम्भव; किन्तु वे, यकार के पूर्व निर्बल, अतः 'अइ' ही अधिक उपयुक्त ।

१७. पैर = पैर'
बैल = बैल'
मैल = मैल'
(ऐ = ऐ)

१८. 'पैर' का उच्चारण
पएँर (प'एँ'र)
पयर (प'यर)
पय्र (पय्'र)

---

१ 'ऐसो को उदार जग माहीं ।' (ब्रजभाषा) —विनयपत्रिका ।

पइर (प'इर)
जैसा न होने से, 'ऐ', अविकृत ।[1]

१९. ऐकिक = अय्'किक (ऐ'किक)
दैनिक = दय्'निक (दै'निक)
सैनिक = सय्'निक (सै'निक)
(ऐ = अय्) ।[2]

२०. ऐकिक = अइ'किक (ऐ'किक)
दैनिक = दइ'निक (दै'निक)
सैनिक = सइ'निक (सै'निक)
(ऐ = अइ)

२१. तत्सम शब्दों में 'ऐ' के दो उच्चारण 'अय्' और 'अइ'।

२२. तत्सम शब्दों में, 'ऐ' का 'अइ' कदाचित् संस्कृत भाषा के प्रभाव से।

२३. दैव = दैव
शैल = शैल
वैर = वैर
(ऐ = ऐ) ।

२४. तथैव = त'थैव
सदैव = स'दैव
एकैक = ए'कैक
(ऐ = ऐ) ।

---

१. इसी प्रकार 'बैल' आदि का ऐकार भी अविकृत ।

२. 'अय'किक' आदि उच्चारण शिथिल, अतः 'ऐ' = 'अय' को 'मानक' बनाना ठीक नहीं ।

२५. भैरवी = भैर'वी
वैनतेय = वैन'तेय
ऐतिहासिक = ऐति'हा'सिक
(ऐ = ऐ)।

२६. भैक्ष = भैक्'ष
ऐक्य = ऐक्'क्य
मतैक्य = म'तैक्'क्य
(ऐ = ऐ)।

२७. 'दैव' आदि तत्सम शब्दों में, 'ऐ' एक मूल स्वर।

२८. कस्मै = कस्'मई
तस्मै = तस्'मई
यस्मै = यस्'मई
(ऐ = अई)।

२९. संस्कृत के 'कस्मै' आदि के शब्दों के, अन्त्य 'ऐ का अई', जो हिन्दी की दृष्टि से नगण्य।

३०. रै = रइ
गै = गइ
होने से,
संस्कृत में अन्त्य 'ऐ', सर्वत्र 'अई' नहीं।

३१. चौका = चव'का (चौ'का)
चौकी = चव'की (चौ'की)
चौके = चव'के (चौ'के)।

३२. चौड़ा = चव'ड़ा (चौ'ड़ा)
चौड़ी = चव'ड़ी (चौ'ड़ी)

	चौड़े	=	चव़ड़े	(चौ'ड़े)
				(औ = अव) ।
३३.	जौ	=	जव'	(जौ')
	सौ	=	सव'	(सौ')
	नौ	=	नव'	(नौ')[1]
				(औ = अव) ।
३४.	चौका	=	चव्'का	(चौ'का)
	चौड़ा	=	चव्'ड़ा	(चौ'ड़ा)
	जौ	=	जव्'	(जौ')
				(औ = अव्) ।

३५. बलाघात से 'अव' का 'अव्' ।

३६.	चौका	=	चओ॑'का	(चौ'का)
	चौड़ा	=	चओ॑'ड़ा	(चौ'ड़ा)
	जौ	=	जओ॑'	(जौ')
				(औ = अओ॑) ।

३७. बल की न्यूनता से 'अव' का अओ॑ ।

३८.	कौवा	=	कउ'वा	(कौ'वा)
	पौवा	=	पउ'वा	(पौ'वा)
	हौवा	=	हउ'वा	(हौ'वा)
				(औ = अउ) ।

३९. 'कौवा' आदि के 'कवो॑'वा, कव'वा, कव्'वा', आदि उच्चारण भी सम्भव, किन्तु 'व' वकार के पूर्व निर्बल, अतः 'अउ' ही अधिक उपयुक्त ।

१

४०. और = और
चौक = चौक
दौड़ = दौड़ ।
(औ = औ)

४१. लौटना = लौट'ना
दौड़ना = दौड़'ना
औटना = औट'ना ।
(औ = औ)

४२. और' का उच्चारण
अओॅर (अ'ओॅर)
अवर (अ'वर)
अव्र (अव्'र)
अउर (अ'उर)[1]
जैसा न होने से,
'औ', यहाँ स्वयं एक मूल स्वर ।

४३. औरस = अव्'रस (औ'रस)
कौतुक = कव्'तुक (कौ'तुक)
कौशिक = कव्'शिक (कौ'शिक)
(औ = अव्)

४४. औरस = अउ'रस (औ'रस)
कौतुक = कउ'तुक (कौ'तुक)
कौशिक = कउ'शिक (कौ'शिक)
(औ = अउ)

---

१. अवधी में 'अउर का' आदि के रूप में 'अउर' का प्रयोग होता है किन्तु वह खड़ीबोली का उच्चारण नहीं, न उसकी यहाँ विवेचना ही इष्ट ।

४५. तत्सम शब्दों में 'औ' के दो उच्चारण 'अव्' और 'अउ', जिनमें हिन्दी की दृष्टि से 'अव्' ही अधिक उपयुक्त ।

४६. सौर = सौर
पौष = पौष
मौन = मौन
(औ = औ) ।

४७. गौरि = गौरि
पौलि = पौलि
मौलि = मौलि
(औ = औ) ।

४८. कौमुदी = कौमु'दी
कौतुकी = कौतु'की
कौशिकी = कौशि'की
(औ = औ)[१] ।

४९. कौन्तेय = कौन्'तेय
कौस्तुभ = कौस्'तुभ
मौक्तिक = मौक्'तिक
(औ = औ) ।

५०. पौत्र = पौत्'त्र
पौत्री = पौत्'त्री
पौत्रिक = पौत्'त्रिक
(औ = औ) ।

---

१. इन शब्दों का उच्चारण 'कव्'मुदी' (कौ'मुदी) आदि के रूप में भी सम्भव, ऐसी दशा में 'औ' = अव् ।

५१. 'सौर' आदि शब्दों में,
'औ' एक मूल स्वर।

५२. नौ[1] = नऊ
गतौ = ग'तऊ
वालकौ = वाल'कऊ

५३. 'नौ' आदि शब्दों में अन्त्य 'औ' का 'अऊ', जो हिन्दी की दृष्टि से नगण्य।

५४. ऐ का अय्
औ का अव्
होना
अयादि भाव की प्राप्ति।

५५. ऐ का अय
औ का अव
होना
स्वरान्त अयादि भाव की प्राप्ति।

५६. संयुक्त स्वर के रूप में—
ऐ, अएँ — अइ
औ, अओं — अउ
के
उच्चारणों में सुरक्षित।

५७. 'अएँ, अओं' के अत्यन्त निर्बल होने से, उसे उच्चारण में सुरक्षित रखना कठिन।

---

१ 'नौ' एक सर्वनाम रूप।

५८. 'अइ, अउ' उच्चारण भी प्रायः संस्कृत के दृष्टि-कोण से।

५९. हिन्दी के तत्सम शब्दों में, 'ऐ' का मानक उच्चारण प्रायः 'अय्', 'औ' का मानक उच्चारण प्रायः 'अव'।

६०. हिन्दी के तद्भव शब्दों में, 'ऐ' का मानक उच्चारण प्रायः 'अय'; 'औ' का मानक उच्चारण प्रायः 'अव'।

६१. संयुक्त स्वर की दृष्टि से, हिन्दी में, 'ऐ-औ' की सत्ता प्रायः समाप्त।

६२. एक ही उच्चारण-खण्ड में स्थित ह्रस्वाक्षर या शुद्ध व्यञ्जनों के पूर्व 'ऐ-औ' अविकृत अथवा मूल स्वर।

६३. ह्रस्वाक्षर क्यों ?

शैल = शैल
गौरि = गौरि
किन्तु
शैला = शै'ला = शय्'ला
गौरि = गौ'रि = गव्'री।

६४. तद्भव शब्दों में भी—

पैर = पैर'
चौक = चौक'
किन्तु
पैरा = पै'रा = पय'रा[1]

---

१. अवधी पुआल।

चौका = चौ'का = चव'का ।

६५. एक ही उच्चारण-खण्ड क्यों ?

भैरवी = भैर'वी

कौतुकी = कौतु'की[1]

किन्तु

भैरव = भै'रव = भय्'रव

कौतुक = कौ'तुक = कव्'तुक[2] ।

६६. तद्भव शब्दों में भी

बैल = बैल

चौक = चौक

किन्तु

बैलन = बै'लन = वय'लन[3]

चौकस = चौ'कस = चव'कस[4] ।

६७. उच्चारण-खण्ड में पृथक् रहने पर,

'ऐ-औ' सदा विकृत ।

६८. ऐक्य = ऐ'क्य = अइ'क्य

सैन्य = सै'न्य = सइ'न्य

मतैक्य = म'तै'क्य = म'तइ'क्य

(ऐ = अइ) ।

ऐक्य = ऐक्'क्य

सैन्य = सैन्'न्य

मतैक्य = म'तैक्'क्य

(ऐ = ऐ) ।

---

१. यहाँ ह्रस्वाक्षर, 'ऐ-औ' के साथ ।

२. यहाँ ह्रस्वाक्षर, 'ऐ-औ' से पृथक् ।

३. अवधी ।

४. तत्सम ।

६९. पौत्र = पौ'त्र = पउ'त्र
पौत्री = पौ'त्री = पउ'त्री
पौत्रिक = पौ'त्रिक = पउ'त्रिक ।
(औ = अउ) ।

किन्तु

पौत्र — पौ'त्त्र
पौत्री — पौत्'त्री
पौत्रिक — पौ'त्त्रिक
(औ = औ) ।

७०. द्वित्व के अभाव में, 'ऐक्य एवं पौत्र' आदि का 'ऐ—औ' भी विकृत ।

७१. द्वित्व से ऐसे शुद्ध व्यञ्जनों की प्राप्ति, जो संविभाग नियम से 'ऐ—औ' के साथ, फलतः वे अविकृत ।

७२. भैक्ष — भैक्'ष
कौस्तुभ — कौस्'तुभ
कौन्तेय — कौ'न्तेय ।

७३. शुद्ध व्यञ्जनों के पूर्व 'ऐ—औ' सदा अविकृत ।[1]

सम्बन्ध निर्देश

१ से ७, ८ से १८, १९ से ३०, ३१ से ४२, ४३ से ५३, ५४ से ५८, ५९ से ६१, ६२ से ६७, ६८ से ७३ ।

●

---

१. जहाँ शुद्ध व्यञ्जनों का उच्चारण पूर्व स्वर पर निर्भर हो ।

कुछ विशिष्ट ध्वनियाँ

१. क्ष — त्र — ज्ञ।

२. क् + ष् = क्ष
   क्ष् + अ = क्ष।

३. त् + र् = त्र्
   त्र् + अ = त्र।

४. ज् + ञ् = ज्ञ्
   ज्ञ् + अ = ज्ञ।

५. 'क्ष्— त्र् — ज्ञ्' संयुक्त व्यञ्जन।

६. प्रयोग बाहुल्य एवं अपनी उच्चारणीय विशेषताओं के कारण, 'क्ष्' आदि, अन्य संयुक्त ध्वनियों से कुछ विशिष्ट।

७. क्षीर = छीर
   क्षेत्र = छेत्'त्र
   क्षुद्र = छुद्'द्र।

८. कक्षा = कक्'छा, कक्'शा
   रक्षा = रक्'छा, रक्'शा
   शिक्षा = शिक्'छा, शिक्'शा।

९. क्षमा = अक्छ्'मा, अक्श्'मा
   क्षणत = अक्छ्'णत, अक्श्'णत।

१० क्ष्वेड = छवेड।

११. सूक्ष्म = सूक्छ्'म, सूक्'श्'म
लक्ष्मी = लक्छ्'मी, लक्श्'मी।

१२. लक्ष्य = लक्'छ्य, लक्'श्य
साक्ष्य = साक्'छ्य, साक्'श्य।

१३. आद्य क्ष् = छ्, अर्थात् ऐसी दशा में 'क्' का लोप।

१४. आगम तथा अन्य दशाओं में—'क्ष् = क् + छ्' या 'क् + श्' अर्थात् संयुक्त व्यञ्जन के दोनों अंश प्रकट।

१५. 'षकार' का उच्चारण अनिश्चित होने से, संयुक्त व्यञ्जन के रूप में, उसे निश्चित कर पाना कठिन।

१६. क्षकार का वर्णमालीय उच्चारण 'छ' जो कृत्रिम।

१७. उच्चारण भेद के लिए, आद्य 'क्ष' को 'छ' का सबल रूप, मानकर उसे उच्चारण करना ठीक।

१८. 'क्' के साथ आये 'छ्' को भी, सबल मानना और सबल उच्चारण करना ठीक।

१९. आजकल क्षकार, प्रायः 'क्श्' के रूप में, वैसे 'क्छ्' भी एक मान्य साहित्यिक उच्चारण।

२०. कक्षा = कच्छा = कच्'छा
रक्षा = रच्छा = रच्'छा,
आदि उच्चारण बिल्कुल निर्बल एवं अशिक्षितों की भाषा तक सीमित, अतः वे 'मानक-योग्य' नहीं।

२१. त्रुटि = त्रुटि
त्राण = त्राण
त्रेता = त्रेता ।

२२. यन्त्र = यन्'त्र
तन्त्र = तन्'त्र
मन्त्र = मन्'त्र ।

२३. त्र्यूषण = त्र्यू'षण
त्र्यम्बक = त्र्यम्'बक

२४. स्वातन्त्र्य = स्वा'तन्'त्र्य
पारतन्त्र्य = पार'तन्'त्र्य ।

२५. 'त्र् या त्र' के उच्चारण में, मूल व्यञ्जनों का सबल योग मात्र ।

२६. ज्ञात = ग्यात
ज्ञेय = ग्येय
ज्ञानी = ग्यानी ।

२७. विज्ञात = विग्'ग्यात
विज्ञेय = विग्'ग्येय
जिज्ञासा = जिग्'ग्यासा ।

२८. आज्ञा = आ'ग्याँ
प्रतिज्ञा = प्र'तिग्'ग्याँ
अवज्ञा = अ'वग्'ग्याँ ।

२९. शब्दों में 'ज्ञ' का उच्चारण 'ग्य' या ग्याँ ।

३० अन्त्य ज्ञ का उच्चारण 'ग्यँ' शेष का 'ग्य' ।

३१. ज्ञान = ग्याँनँ
ज्ञानी = ग्याँनी
आदि में अनुनासिकता नकार के कारण ।

३२. अज्ञ = अग्'ग्य
संज्ञा = सँग्या
आदि में अन्त्य 'ज्ञ' को भी, अनुनासिकता का ह्रास ।

३३. ज्ञान = ज्याँनँ
आज्ञा = आज्'ज्याँ
विज्ञान = विज्'ज्याँनँ ।

३४. कुछ विद्वान् 'ग्यँ' के स्थान पर, 'ज्यँ' बोलते हुए मूल जकार के रक्षक ।

३५. 'भुज्' से 'भोज्य—भोग्य',
'युज्' से 'योज्य—योग्य' के समान, 'ज्यँ' के स्थान पर 'ग्यँ' होना भी अशास्त्रीय नहीं ।

३६. शब्दों में, शुद्ध 'ज्ञ्', अप्रयुक्त अर्थात् मात्र स्वरान्त 'ज्ञ' प्रयुक्त ।

३७. 'ञ्' का उच्चारण, स्वयं में अनिश्चित होने से, संयुक्त व्यञ्जन के रूप में भी अनिश्चित ।

सम्बन्ध-निर्देश

१ से ६, ७ से २०, २१ से २५, २६ से ३७ ।

लुप्त ध्वनियाँ

१. ऋ, ॠ, ष्, ञ्, ण्।

२.	ऋषि	=	रिशि
	कृषि	=	किरशि
	तृप्त	=	त्रिप्'त ।
३.	मातृ	=	मात्'त्रि
	पितृ	=	पित्'त्रि
	भ्रातृ	=	भ्रात्'त्रि।
४.	कर्तृ	=	कर्'त्रि
	संस्कृत	=	संस्'किरत।
५.	प्रकृति	=	प्र'–क्रिति
	आकृति	=	आ'–क्रिति।
६.	ऋ	=	रि।

७. ऋ का 'रि' होने से द्वित्व एवं संविभाग की परिस्थितियाँ भी उत्पन्न।[1]

८.	कॄ	=	क्री
	गॄ	=	ग्री।
९.	कॄकार	=	क्री'कार
	होतॄकार	=	होत्'त्री'कार।
१०.	ॠ	=	री।

---

१. सूत्र ३

११. उच्चारण भेद के लिए,
ऋ को 'रि' का,
ॠ को 'री' का
सबल रूप मानना उचित ।

१२. सबल रूप मान लेने से,
ऌ–ॡ, वर्णमाला के योग्य;
अन्यथा उनके लोप का प्रसंग ।

१३. षट् = खट्
षड् = खड्
षोडश = खो'डश ।

१४. विष = विश
शेष = शेश
दोष = दोश ।

१५. विषय = वि'शय
पोषण = पो'शण
शोषण = शो'शण ।

१६. हर्ष = हर्'ष
वर्ष = वर्'श
वर्षा = वर्'शा ।

१७. अष्ट = अश्'ट
तुष्ट = तुश्'ट
पृष्ठ = पृश्'ठ ।

१८. शिष्य = शिश्'श्य
भीष्म = भीश'म

	निष्पाप	=	निश्'पाप।
१६.	आद्य ष	=	ख और
	शेष दशाओं में, ष	=	श।

२०. शुद्ध 'ष्' का आद्य प्रयोग नहीं,
अन्य दशाओं में वह, 'श्' मात्र ।[1]

२१.	हर्ष	=	हर्ख
	वर्षा	=	वर्खा
२२.	विष	=	विख
	दोष	=	दोख।
२३.	विषय	=	वि'खय
	पोषण	=	पो'खण।

२४. 'षकार' का मध्यकालीन उच्चारण प्रायः 'खकार'।

२५. प्रायः क्यों ?
'अष्ट' आदि शब्दों में उसका उच्चारण 'ख्' न होने से।

२६. वेदपाठी ब्राह्मणों के मुख से, 'हविषा विधेम' का उच्चारण, 'हविखा विधेम' सुन पड़ने से षकार के प्राचीन उच्चारण पर प्रकाश।

२७. केशवी शिक्षा के अनुसार, ट वर्ग से सम्बन्ध न

---

१. संस्कृत के 'ष्वःकृति—ष्वष्कृति' आदि कुछ शब्दों में, आद्य 'ष्' के भी दर्शन, किन्तु हिन्दी की दृष्टि से वे अनुपयोगी। यहाँ वकार के पूर्व उसका उच्चारण—ष्व कति स्वसकति के रूप में 'स'।

होने की दशा में 'ष्' का उच्चारण 'ख' ।[१]

२८. रक्षा = रक्'षा = रक्'छा
शिक्षा = शिक'षा = शिक्'छा,
आदि के रूप में, 'षकार' का उच्चारण 'छकार' भी ।[२]

२९. षकार के तीन उच्चारण—
ख्—श्—छ् (या ख–श–छ) ।[३]

३०. 'षकार का उच्चारण प्रत्येक युग में दोलायमान ।

३१. जिस प्रकार दन्त्य त वर्ग से, मूर्धन्य ट वर्ग की संगति, उसी प्रकार पूर्णता के लिए, दन्त्य सकार से—मूर्धन्य षकार की कल्पना, वास्तव में षकार कोई स्वतन्त्र ध्वनि नहीं ।

३२. शास्त्रीय दृष्टि से, तालव्य 'श्' से भी, मूर्धन्य 'ष्' पृथक्, किन्तु उच्चारण में, इसे पृथक् कर पाना सम्भव नहीं ।

३३. उच्चारण में, 'शकार-षकार' एक जैसे ।[४]

३४. पार्थक्य-दृष्टि से, जिन दशाओं में 'षकार' का उच्चारण 'शकार', उन दशाओं में उसे सामान्य 'शकार' से सबल मानना उचित ।

---

१. 'षः खष्टु मृते च ।
२. 'रक्षा' आदि विकल्प से रक्'शा' आदि भी ।
३. 'ख—श—छ' स्वरान्त दशा के सूचक ।
४. यह नियम उन परिस्थितियों के लिए है, जहाँ षकार का उच्चारण शकार जैसा होता है ।

३५. अञ्चल = अन्'चल
चञ्चल = चन्'चल।

३६. कुञ्ज = कुन्'ज
पुञ्ज = पुन्'ज।

३७. ञ् = न्।

३८. संयम = सं'जम
संयोग = सं'जोग।

३९. संयम = सञ्'यम = सँय्ँ'यम
संयोग = सञ्'योग = सँय्ँ'योग।

४०. यकार के पूर्व आये अनुस्वार का उच्चारण प्रायः न्, किन्तु तालव्य नियम से वह 'ञ्' (= यँ) के योग्य भी।

४१. कण = कँड़
गण = गँड़
गुण = गुँड़।

४२. स्वरान्त 'ण' = स्वरान्त 'ड़'।

४३. 'ण' का 'ड़' होने पर णकार की अनुनासिकता, पूर्व स्वर तक सीमित, 'ड़कार' में उसकी अनुनासिकता का पूर्णतः लोप।

४४. कण्ठ = कँन्'ठ
खण्ड = खँन्'ड
काण्ड = काँन्'ड।

४५. टवर्ग के पूर्व ण् = न्।[1]

---

१. 'ण' अर्थात शुद्ध णकार = न अर्थात् शुद्ध नकार।

४६. पुण्य = पुँड़'ड़्य
गुण्य = गुँड़्'ड़्य
कण्व = कँड़्'ड़्व ।

४७. यकार—वकार के पूर्व,
ण्=ड़्, पूर्व स्वर को अनुनासिक
करते हुए ।

४८. यकार—वकार के पूर्व
'ड़्' का द्वित्व पूर्ववत् ।

४९. बड़ी = बड़ी
बड़ाई = ब'ड़ाई
गाड़ी = गाड़ी ।

५०. 'ड़' में तनिक भी अनुनासिकता नहीं, किन्तु 'ण' में कम-से-कम स्वर प्रभावक अनुनासिकता अवश्य विद्यमान ।

५१. 'ण' का वर्णमालीय उच्चारण 'ड़ँ' जो अब प्रायः 'ड़' ।

५२. 'ण' के लोप की कल्पना 'ड़' के विकास से, वस्तुतः 'ण', 'न' का मूर्धन्य रूप, अतः टवर्ग के समान सुरक्षित रखने योग्य ।

५३. 'कण-प्राण' आदि शब्द,
'कड़-प्राड़' आदि के कदापि योग्य नहीं ।
अतः 'णकार' को सुरक्षित रखना आवश्यक ।

५४. 'णकार' को सुरक्षित रखने से, तत्सम शब्दों की रक्षा भी ।

५५. तत्सम शब्दों की रक्षा के लिए, यथासम्भव लुप्त-प्राय ध्वनियों के रूप को स्थिर करना और उन्हें बनाये रखना आवश्यक।

संबंध-निर्देश

१, २ से ७, ८ से १०, ११, १२, १३ से ३४, ३५ से ४०; ४१ से ५४, ५५।

: १८ :

लिपि

१. लिखित भाषा के शब्दों की उच्चारण-शुद्धता बहुत कुछ उसकी निर्दोष लिपि पर निर्भर, अतः वह विचारणीय।

२. जैसा = जैसा

कैसा = कैसा

किन्तु

'ऐसा' कभी-कभी 'येसा'

'ऐसी' कभी-कभी 'येसी'

क्यों ?

३. ए का संक्षिप्त रूप, े

ऐ का संक्षिप्त रूप, ै।

४. 'ऐ' में 'ए' के संक्षिप्त रूप का भ्रम, अतः 'येसा आदि उच्चारण भी सुनने में।

५. 'ऐ' 'ऐ' के रूप में संशोध्य।

६. 'ऐ' को 'ऐ' रूप देने पर 'ए' को 'ऐ' का रूप देना भी असंगत नहीं।

७. नया रूप देने पर भी

ऐ, ऐ का संक्षिप्त रूप पूर्ववत े, ै

८. इस = इस
इधर = इ'धर
इतना = इ'तना।

९. किस = क्+इ+स
स्थिर = स्+थ्+इ+र
यान्त्रिक = या+न्+त्+र्+इ+क
यहाँ इकार की मात्रा (ि) क्रमशः एक, दो, तीन व्यञ्जनों के पूर्व।

१०. अनुक्रम-दृष्टि से, इकार की मात्रा अथवा उसका संक्षिप्त रूप अत्यन्त दूषित।

११. इकार के दूर पड़ जाने से, 'स्थिर' आदि में 'थकार' आदि के अकारान्त होने का भ्रम भी।

१२. इ' का संक्षिप्त रूप संशोध्य।

१३. का = क्→आ (ा)
कु = क्↓उ (ु)
के = क्↑ए (े)
कि = ↑क्+इ (ि)

१४. किसी व्यञ्जन पर मात्रा लगाने की चार दशाएँ—

ऊपर
↑
बायें ←→ दायें
↓
नीचे
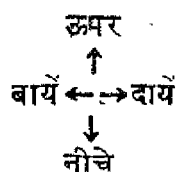
१५. लिखित भाषा की दृष्टि से, मात्रा स्वरों का संक्षिप्त रूप; किन्तु उच्चारण-दृष्टि से वह सदा व्यञ्जनों के पीछे आनेवाली स्वर ध्वनि अतः

अनुक्रम में उसे व्यञ्जनों से पूर्व लिखना सर्वथा अनुचित ।

१६. तर्क्य = तर्‌क्‌य
भर्त्सना = भर्‌त्‌सना
कार्त्स्न्य = कार्‌त्‌स्‌न्‌य

१७. शुद्ध या छन्न रकार का व्यञ्जन-व्यवधान से अंकित होना भी चिन्तनीय ।

१८. संक्षिप्तता के लोभ में
इ को अि
ई को अी
उ को अु
ऊ को अू
आदि, लिखना उचित नहीं ।

१९. 'इ-उ' आदि अकारजन्य नहीं, अतः उन्हें 'अ' की सहायता से लिखना, भ्रामक ।

२०. विश्व-तुष्टि, विश्व-पुष्टि ।

सम्बन्ध-निर्देश

१, २ से ७, ८ से १२, १३ से १५, १६-१७, १८-१९, २० ।

शुद्धवर्ण-विन्यास

पृष्ठ	सूत्र	मुद्रित	शुद्धरूप
५	३	ल	ल्
६	८	स्वर	स्वर
७	१२	एव	एवं
७	१७	'अ इ'	'अइ'
		'अ उ'	'अउ'
९	३१	स्वरान्त	स्वरान्त
१३	१७	मे'धावी	मे'धावी
१५	३७	लफ'लता	सफ'लता
		कोम'लता	कोम'लता
		ऽ ।	ऽ ।
२५	२	रक्'त	रक्'त
२९	२५	ट वर्ग	टवर्ग
२९	२६	ऱ् (+क्)	र (+क्)
३३	२०	'द्वित्व' से	'द्वित्व' में
४२	४	र कार	रकार
४३		(अर्द्'ध'क	(अर्द्'धक)
४५	२५	विचारणीय	विचारणीय।
	२६	बिल कुल	बिल्कुल
४७	टि०-१	ङ	ङ्
६४	टि०-३	=(बिन्दु+स्वर +अनुग)	='बिन्दु+स्वर +अनुग'
६५	१८	अङ्क	अङ्क
	१८	अङ्ग्	अङ्ग
	२०	=ण्=न्	=ण्=न्
६६	२५	'ण'	'ण्'
६८	४७	सम्राट	सम्राट्
		संराट	संराट्

पृष्ठ	सूत्र	मुद्रित	शुद्धरूप
६६	५०	नतन	नूतन
७०	५२	प्रयो	प्रयोग
	६	ईटा	ईँटा
७१	७	कहा	कहीँ
	१०	भँस	भैँस
७२	१५	हँस = हन्स	हंस = हन्स
७३	२३	संस्स्कर्त्ता;	सँस्स् कर्ता;
		संस्स् कर्ता	संस्स् कर्त्ता
	२६	(चक' क्रिन्स'	चक्' क्रिन्स' त्रा'
		त्रा' यस्-स्वें)	यस्' स्व
७६	११	नेय	'नेय'
		माया	'माया'
८२	७	ड् = ड़	ड् = ड़्
८४	१७	ब्रह्मी	ब्राह्मी
९०	२३	'सोँर'ही'	'सोँर'होँ'
९४	११	हय'	हय्'
९७	२५	भर वी	भैरवी
१०२	५६	'अव'	'अव्'
१०४	७२	कौ'न् तेय	कौन्'तेय
१०५	२	क् + ष् = क्ष	क् + ष् = क्ष्
	९	क्षमा	क्ष्मा
	९	क्षणत	क्ष्णुत
	९	अक्छ्'णत	अक्छ्'णुत
	९	अक्श्'णत	अक्श्'णुत